वेयर डू आई बिलॉन्ग?

अर्चना पैन्यूली

मेरे पिता स्व. श्री महीधर देवली को सादर समर्पित, जिन्होंने मुझे जिन्दगी में कुछ कर गुजरने, मुझे लिखने के लिये हमेशा प्रेरित किया।

पाठको से

इस उपन्यास की संकल्पना मैंने **2001** में करली थी। **2002** तक इसका पहला पाण्डुलेख लिखा जा चुका था। तब तक डेनमार्क में रहते हुये मुझे पॉच वर्ष के करीब हो गये थे। यहॉ के समाज से मैं थोड़ा जुड़ गई थी। यहॉ, यानी विदेश में बसा अपने भारतीय समुदाय को काफी कुछ समझ-परख लिया था।

सभी को अपनी जगह व अपने देश से अगाध प्रेम होता है मगर जब इन्सान वहॉ विद्यमान अथवा उपजी मुसीबतों को अत्यन्त कठोर पाता है तो वहॉ से पलायन करना चाहता है, एक बेहतर एवम् सुरक्षित गन्तव्य की ओर। कभी अज्ञात राहों की खोज की जिजीविषा, नई अन्जानी जगह जाकर जीवन जीने की लिप्सा, दौलत कमाने की आकांक्षा व एक अधिक अच्छी जिन्दगी की अभिलाषा इन्सान को अपना नीड़ छोड़कर उड़ान भरने को प्रेरित करती है। मगर अपने नये परिवेश से वह कितना सामंजस्य स्थापित कर पाता है? अपने संस्कार व मूल्य जिन्हें लेकर वह बड़ा होता है उन्हें वह कितना छोड़ पाता है?

प्रवासन के परिमण्डल तहत भारत से लोगों का दूसरे देशों की ओर पलायन अति प्राचीन है। भारतवासी जहॉ भी गये अपनी संस्कृति, सभ्यता व परंपरायें जीवित रखने की उन्होंने भरसक चेष्टा की। परिवर्तन को स्वीकार करने व एक नये समाज से एकीकरण में अगर उन्होंने हिचकिचाइट नहीं बरती तो अपने भारतीय होने की चेतना को भी वे भूले नहीं। सभी ऐशियायी देशों के नागरिकों की तुलना में भारतवासी ऐसे हैं जो अपनी नयी दुनिया की धारा में सरलता से घुममिल जाते हैं, साथ ही अपनी सांस्कृतिक पहचान बनाये रखते हैं।

उत्तरी योरोप में स्थित स्केन्डिनेवियन देश डेनमार्क में आज, सन् **2008** में इमीग्रेन्टेस व उनके वंशज देश की कुल जनसंख्या **5.4** मीलियन का लगभग आठ प्रतिशत है। इंडियन्स मुश्किल से **0.06** प्रतिशत - **4000** है। गौरतलब बात यह है कि सत्तर प्रतिशत से अधिक भारतीय जनसंख्या डेनमार्क के प्रमुख द्वीप सैलेण्ड, जहॉ राजधानी कोपनहेगन बसी है, में एक-दूसरे से चन्द किमी की दूरी पर ही रहते हैं। इंडियन कॉम्यूनीटी यहॉ हर तरह के पेशे में संलग्न है - रिसर्च, इंजीनियरिंग, फाइनेन्स से लेकर किराने की दुकान, इंडियन रेस्टोरन्ट के मालिक व बस-टेक्सी के चालक। डेनमार्क में इंडियन इमीग्रेन्ट्स को दो वर्गो में बांटा जा सकता है। पहला रिफ्यूजी या वह तबका जो अपने भारत को अलविदा कह हमेशा के लिये डेनमार्क बस जाने के उद्देश्य से आया, कालान्तर में डेनिश नागरिकता अपना कर इसी देश का हो गया। दूसरा प्लावी वर्ग जो मुख्यतय: संयुक्त राष्ट्र संघ व मल्टीनेशनल कंपनी में कार्य करने आता है। कुछ वर्ष यहॉ रह कर, यहॉ के अनुभव बटौर कर किसी अन्य गन्तव्य की ओर चला जाता है।

इस उपन्यास में मैंने मुख्यतया विदेश में बसे भारतीयों के संघर्ष, द्वन्द्व, भ्रम, कठिनाईयां, जो उन्होंने भोगा-सहा, उनके सोच-विचार, भय-चिंतायें, कामयाबी-उपलब्धियां, दो संस्कृतियों के बीच उनकी जूझ, इमीग्रेशन इशू आदि को दर्शाना चाहा। ये सब सिर्फ एक नायक या एक नायिका को लेकर संभव नहीं था। रीना का मुख्य नायिका रखते हुये मैंने अन्य चरित्रों की परिकल्पना की। सो गोविन्द प्रकाश शान्डिल्य, स्टेफेनी, स्मिता, डा. डेव आदि जैसे पात्रों का निर्माण हुआ जो कहानी में अपना एक अलग अस्तित्व रखते हैं। यद्यपि कथानक काल्पनिक है, कथानक में प्रस्तुत चरित्रों के सोच-विचार, आशा-आकांशा अपेक्षा-शिकायत व अनुभव असली हैं। अगर गोविन्द प्रकाश कुछ कह या विचार रहे हैं वे, गोविन्द प्रकाश जिनको प्रतिबिंबित कर रहे हैं, कह रहे हैं। लोगों के भीतर क्या उमड़ रहा है, उनके मन-मस्तिष्क में क्या घुमड़ रहा है, मैंने सिर्फ इसकी प्रस्तुतिकरण करने की चेष्टा की है। अपनी तरफ से कुछ नहीं लिखा। मैं उससे सहमत-असहमत भी नहीं। हॉ, मेरा अनुभव सीमित हो सकता है।

मुझे जो सबसे बड़ी दिक्कत हुई वह यह कि अपने पात्रों की उमर का बन कर उनके दृष्टिकोण, मान्यता, मानसिकता, धारणा, उनके मर्म में पहुँच कर उनके विचार जानना व समझना। आर-एंड-डी करने की कोशिश की। मगर अक्सर लोग छिपाव प्रकृति के होते हैं, विशेष कर युवा पीढ़ी।

पांडुलिपि को अन्तिम रूप देने में लगभग छ: वर्ष का समय लगा। इन छ: वर्षो के दरमियान जो कुछ भी मैंने छानबीन, पूछताछ की, अन्वेषण किया और अपनी लेखन क्षमता के दम पर यह उपन्यास रचा और अब यह

आपके सम्मुख प्रस्तुत है। कई लोगों, साहित्यिक क्षेत्र से सम्बन्धित एवम् आम पाठक वर्ग ने इसकी पाण्डुलिपि पढ़ी। उनके बहुमूल्य सुझाओं को ध्यान में रखते हुये समय-समय पर पाण्डुलिपि में संशोधन होते गये। फिर भी कहीं न कहीं, कुछ न कुछ चूक हो सकती है। सच्चाई यह है कि आखिरकार 'वेयर डू आई बिलान्ग?' एक कहानी ही तो है...।

जैसा कि सदियों से कहा जा रहा है... साहित्य समाज का दपर्ण है। कोई भी कहानी कोरी कल्पना नहीं हो सकती। पात्र काल्पनिक होते हुये भी वे लेखक के लोक-समाज से वास्तविक सम्बन्ध रखते हैं। कुछ प्रमाणिक संस्थाओं व घटनाक्रमों को काल्पनिक तौर पर प्रस्तुत करने की मैंने 'लिबरटी' लेली। आशा है आपको उपन्यास रोचक लगेगा। आपको उद्वेलित करेगा। अगर आप अपनी प्रतिकिया भेजना चाहे तो स्वागत है।

अर्चना पैन्यूली

Bryggergade 6,2,4
2100 Copenhagen Ø
DENMARK
Email: archana@webspeed.dk
apainuly@gmail.com

Website: www.archanap.com

आभार

इस पुस्तक के सर्जन में मुझे लगभग छ: वर्ष लगे। कई लोगों का सायास-अनायास, प्रत्यक्ष-परोक्ष सहयोग मुझे प्राप्त हुआ, जिन्होंने मेरे कार्य में रूचि ली और अपने बहूमुल्यों सुझावों द्वारा मेरे कार्य को सुन्दर से सुन्दरतम बनाने की चेष्टा की।

हालांकि इस उपन्यास की संकल्पना के समय मुझे डेनर्माक में रहते हुये पॉच वर्ष हो चुके थे मगर इस देश के नियम-प्रणाली, स्थितियों और विशिष्टताओं से मेरी प्रयाप्त भिज्ञता नहीं थी। इस संबंध में कुछ संदर्भ पुस्तकों के आलावा जिमनेजियम प्रवक्ता श्रीमती अनेटा प्रिस्कोट व डेनिश पत्रकार श्रीमती किन्सटन पुरकेजान मेरी जानकारी के सहज स्रोत बनी। देशीय सम्बन्धित उनके सुझाव उपन्यास लेखन में सहायक रहें।

साहित्यिक अभिरूचि से परिपूर्ण कुछ संवेदनशील पाठकों ने मेरे उपन्यास की पांडुलिपि पढ़ कर अपनी प्रतिक्रियाओं से मेरे उपन्यास को जनापेक्षाओं के निकट पहुॅचाने में मेरी सहायता की। उनमें से ये नाम उल्लेखनीय हैं : भारत निवासी श्री गोविन्द प्रसाद बहुगुणा, श्रीमती सरोजनी नौटियाल, श्रीमती सुधा जुगरान व श्रीमती सुधा थपलियाल व डेनमार्क निवासी श्री आयासिंह, श्री मंगाराम हरवानी, श्री गुड़चरन मिंगलानी व श्रीमती मंगला गुप्ता। मैं इन सभी के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करती हूॅ।

मुंबई निवासी साहित्यकार श्री सूरज प्रकाश ने मेरे उपन्यास में अपनी जिज्ञासा दिखा व अपने चन्द कीमती क्षण मेरे उपन्यास को समर्पित कर मुझे कृतज्ञता से भर दिया। उन्होंने धैर्य से उपन्यास की पांडुलिपि पढ़ी। भाषा व व्याकरण सम्बन्धित त्रुतियों व सूक्ष्म तकनीकी कमियों की ओर मेरा ध्यान आकर्षित किया और अपनी सारगर्भित टिप्पणियों द्वारा उपन्यास को अधिक प्रमाणिक बनाने में सहयोग दिया।

मेरे पति डा. ज्योति प्रसाद पैन्यूली ने पारिवारिक सहयोग के आलावा कम्प्युटर पर हिन्दी टाइपिंग व उपन्यास के अनगिनित प्रिन्टआउट्स लेने में मेरी जो सहायता की वह इतनी बहूमूल्य है कि इस जन्म में तो उनकी पत्नी बने मैं चुका नहीं सकती।

៖ 1 ៖

शिवभक्त कांवारियों की लंबी पैदल यात्रा की वजह से कई यातायात मार्ग बंद होने के कारण रीना को मोहना, फरीदाबाद से दिल्ली पहुँचने में समान्यत: दो की बजाये पॉच घंटे लग गये, फिर सुबह ही दिल्ली शहर में हुये एक शक्तिशाली बम विस्फोट, जिसने कई जाने लेली थी और कईयों को गंभीर रूप से घायल कर दिया था, की वजह से एयरपोर्ट पर सुरक्षा चौकन्नी थी। हरेक टर्मिनल पर तैनात सुरक्षा कर्मचारी एक-एक यात्री की सख्त जांच कर रहे थे, और जो उनके सूक्ष्म परीक्षण पर खरा उतर रहा था उसे ही एन्ट्री मिल रही थी।

यात्री व उन्हें विदा करने आये लोगों का एक जमघट जो एयरपोर्ट के बाहर बिखरा हुआ था, रीना को बैचेन कर रहा था। एक तो दिल में बम धमाके से मची धुकधुकी, और फिर इतनी सघन भीड़ देखने की उसकी आदत नहीं थी। खुद रीना को विदा करने सात लोगों की बारात ऐसे संवेदनशील माहौल में भी एयरपोर्ट पहुँची थी। ताऊ-ताई व उनका बेटा मोहना से ही उसे लेकर साथ चले थे। उसकी कजिन आभा अपने पति, बेटे व ससुर समेत दिल्ली के राजेन्द्र नगर से उसे सी-ऑफ करने आयी थी। अंधेरे क्षितिज में जगमगाते चॉद-सितारों के नीचे सभी उसे घेरे खड़े थे। अन्तिम पलों में होने वाले किस्से, चुहल उससे कर रहे थे। पर दिल उनका भी सहमा हुआ था। एक बार वह एयरपोर्ट के अन्दर प्रविष्ट हो जाये, वे पीछे से उसकी सुकुमार पीठ देख ले, उसके कदम अपने गन्तव्य की तरफ बढ़ते हुये देख ले तो उन्हें तसल्ली मिल जायेगी। इस बार वह जोश में अकेले ही भारत घूमने आ गई थी, सो उसके रिश्तेदार उसके प्रति अपनी विशेष जिम्मेदारी महसूस कर रहे थे।

एक हाथ से ट्रॉली थामे व दूसरे में अपना पासपोर्ट पकड़े रीना बेतरतीब सी लगी कतार, जो बड़ी ही आहिस्ते आगे बढ़ रही थी, में खड़ी थी। भीड़, इन्तजारी और फिर जुलाई महीने की उमस भरी गर्मी ने उसकी ऊर्जा को चूस लिया था। माथा, पेशनी, गर्दन, टांगें... शरीर के कई हिस्सों से पसीना वह कर उसके कपड़ों को आद्र कर रहा था।

एक घंटे की प्रतीक्षा, जो उसे एक युग की भॉति लगी, के बाद आखिरकार कतार में उसका भी नंबर आया। उसके सभी रिश्तेदार एकाएक कुहके:

"अच्छा, रीना, बहुत अच्छा लगा तुझसे मिलकर।

"एक ताजगी ले आयी तू हमारी डल लाइफ में।"

"अगले बरस फिर आना।"

"डेनमार्क पहुंचते ही फोन कर देना।"

रीना गर्दन हिलाती गई। इतना समय नहीं था कि वह किसी के गले लगे, किसी के पैरों पर झुके या किसी को ढंग से बॉय-टाटा करे। उसके सामने कठोर चेहरे लिये खड़े सुरक्षा कर्मचारी और पीछे बेसब्र कतार...।

अपने पासपोर्ट व अन्य सामान की जॉच-परख करवा, अपने परिजनों से भावात्मक अश्रुपूर्ण विदाई ले, उनकी नजरों से ओझल होते हुये वह एयरपोर्ट के अन्दर घुसी तो उसे एक राहत सी महसूस हुई जैसे जान वापस आ गई हो। एयरपोर्ट कम से कम एयर-कंडीशंड होने की वजह से ठंडा था।

कम से लगे विभिन्न एयर लाइंस के चैक-इन कांउटर्स पढ़ते हुये वह स्केन्डिनेवियन एयरलाइंस के इकॉनॉमी क्लास के चैक-इन काउंटर पर जाकर खड़ी हुई। एक घंटा लग गया टिकट व सामान रजिस्टर व बोर्डिगं कार्ड हासिल करने में। मगर एयरपोर्ट के अन्दर इन्तजार करना बाहर हायतौबा वाली गर्मी में इन्तजार करने की अपेक्षाकृत असहनीय कम था।

चैक-इन काउन्टर से निपट कर वह इमीग्रेशन पर लगी कतार में खड़ी हुई। तदुप्रांत सिक्यूरिटी-चैक की तरफ बढ़ी। यहां जब उसका नंबर आया तो एक गहरे सांवले रंग की मांसल महिला सुरक्षा कर्मचारी, जिसके माथे पर लगी बड़ी सी लाल बिन्दी उसकी खाकी वरदी के साथ हास्यकर लग रही थी, ने उसके समूचे बदन पर अपने दोनों हाथ घुमा-घुमा कर, एक-एक अंग को छू कर ऐसे तलाशी ली जैसे उसके सामने खड़ा हरेक यात्री एक आतंकवादी है और उसके किसी गुप्त अंग में कोई विस्फोटक पदार्थ छुपा है।

आंतकवादी तो अपना काम करके चले गये। उनकी ऐसी तलाशी खामखां ली जारी है। रीना का मुंह बन गया। उसे मुंह बनाते देख सुरक्षा कर्मचारी औरत तड़तड़ाई, "हमें यह करना है। हमें कोई बहुत मजा नहीं आता लोगों की ऐसी तलाशी लेने में।" उसके दोनों हाथ उसके बदन पर और तेजी से चलने लगे। आत्मसमपर्ण की मुद्रा में रीना ने अपने दोनों हाथ फैला लिये। आश्वस्त होकर औरत बोली - डियर यू गो, बेबी। हेव ए नाइस फ्लाइट।"

"उफ् ! इंडिया भी..." भुनभुनाते हुये रीना ने एक्स-रे स्किनिन्ग मशीन से अपना पर्स व बैग उठाया व सिक्यूरिटी-चैक पार कर गेट बी-2 के डिपार्चर लॉज में आ गई। घड़ी में समय देखा – साढ़े बारह बज रहे थे। उसकी फ्लाइट सुबह एक पन्द्रह पर थी, यानी फ्लाइट में पैंतालीस मिनट बाकी। बॉडिंग अभी शुरू नहीं हुई थी।

आखिरकार वह समय से पहुँच गई। यकायक एक सुकून सा उसे मिला। इत्मीनान की सांस भरते हुये वह एक कुर्सी पर पसर गई। एयरपोर्ट का, जो कुछ उसकी ऑखों की परिसीमा में आ रहा था, निरीक्षण करने लगी: गेट्स साइन्स, डिर्पाचर डेस्क, मॉनीटर्स, चाय-कॉफी के डिस्पेन्सर, बदहवाश से इधर-उधर दौड़ते-मंडराते एयरपोर्ट स्टाफ और थके-मांदे यात्री। हालांकि सभी एयरपोर्ट लगभग एक जैसे होते हैं, यहॉ के माहौल में उसे विचित्रता महसूस हो रही थी।

अपनी मार्यादित सीमा से अधिक एयरपोर्ट भरा था। अर्धरात्रि में इतने अधिक लोग पृथ्वी के एक छोर से दूसरे छोर जा रहे थे...। प्लेन की बोर्डिग होने में जो समय बचा था उसे बिताने के लिये कोई इस पहर भी पढ़ रहा था। कुछ खा-पी रहे थे। दो-चार, शायद सौफ्टवेयर इन्डस्ट्री के लोग, लेपटॉप पर काम कर रहे थे जैसे समय का सदुपयोग करने की उन्होंने ठानी हो। कुछ लोग यूं ही हाथ पर हाथ धरे बैठे कहीं शून्य में निहार रहे थे जैसे कोई यात्री, कोई हवाईअड्डा, कोई विमान न हो, सिर्फ समय का एक विस्तार हो। थकावट व उनींदापन जो रीना खुद महसूस कर रही थी सभी के चेहरों से झलक रहा था। रीना ने अपनी थकी ऑखे मूंद ली। सोचने लगी घर पहुँच कर सबसे पहले वह क्या करेगी...। नहायेगी, फिर जी भर कर खूब सोयेगी...।

इतने में कुछ आहट हुई। कोई उसके एकदम समीप आया और हौले से उसकी बगल में बैठ गया। रीना ने अपनी मूंदी ऑखे खोल ली। चारों तरफ नजर घुमाई और महसूस किया कि लॉज में कुछेक कुर्सियां खाली होने के बावजूद उस व्यक्ति ने उसकी बगल वाली कुर्सी चुनी। अस्थिर सा उसके पहलू में बैठा, हाथ में बेतरतीब सी थमी फाइल से वह उलझा हुआ था। रीना ने पलट कर उस पर एक भरपूर नजर डाली। चौबीस-पच्चीस का प्रतीत होने वाला एक जवान व गोरे रंग का युवक था। गठीला व हट्टा-कट्टा। ऑखे चौकन्नी। जहॉ सभी ढीले-ढाले, थकान से चूर लग रहे थे वह इस आधी रात में भी चुस्त-दुरूस्त व उत्साहित लग रहा था। रह-रह कर रीना उसे ताकती रही। वह भी उसे ताकता रहा। अन्ततः रीना मुस्कुरा दी।

"एक्सक्यूज मी- " उसकी मुस्कुराहट ने उसका हौसला बढ़ा दिया। "आप कोपनहेगन जा रही हैं?"

"हॉ।"

"मैं भी..." कहते हुये वह मुस्कुराया, उसके दांये गाल में एक डिम्पल पड़ा। "आप वहॉ पढ़ने जा रही हैं ...?"

"मैं दरअसल वहीं रहती हूँ - अपने परिवार के साथ।"

"कबसे?"

"जन्म से।"

"ओ, आई सी, तो आप डेनमार्क की हैं - डेनिश।"

"या... ए काइन्ड ऑफ"

उसके चेहरे व शारीरिक गठन का मुआयना करते हुये बोला, "खैर दिखने में तो आप इंडियन ही लगती हैं।"

"जेनेटिक कहीं रहने मात्र से बदल नहीं जाती। मेरे सारे जीन्स हिन्दुस्तानी हैं। डेनमार्क तो सिर्फ मेरा होम है।"

"आप वहॉ क्या पढ़ रही हैं ?"

"बायोटेक्नॉलॉजी इंजीनियरिंग।"

"ओह आई सी! वेरी इन्टरस्टिंग!"

"आप कोपनहेगन किस सिलसिले में जा रहे हो?"

वह मुस्कुराया, उसके गाल पर फिर एक डिम्पल पड़ा। उसके गाल में जबतब पड़ने वाला डिम्पल रीना को अच्छा लग रहा था।

"आप यह पता जानती हैं? "उसकी तरफ एक पर्चा बढ़ाते हुये उसने पूछा।

रीना ने पर्चा पकड़ा। किसी मिशनरी सेन्टर का लेटर हैड था। उस पर लिखा पता पढ़ा – केबीसी मिशन ट्रेनिंगसेंटर , हेडमर्क्सवाय **17**, अल्बर्सलुण्ड, डेनमार्क।

"मैं किसी केबीसी मिशन को तो नहीं जानती। पर अल्बर्सलुण्ड डेनमार्क का एक सर्बव है?" कहते हुये रीना ने पर्चा वापस उसकी तरफ बढ़ा दिया।

वह पर्चा हिलाते हुये बोला, "मैने यहां अपने को थियोलॉजी ग्रेजुएट प्रोग्राम के लिये इनरॉल किया है।"

"साउंड इन्टरेस्टिंग, पर यह क्या है?"

"केबीसी मिशन क्रिश्चयन स्टडी सेंटर है। लूथर्न थियोलॉजी सेमीनेरी से जुड़ा है। बाईबल पर स्टडी करने जा रहा हूँ वहां।"

"ओह... आप क्रिश्चियन हैं?"

"नॉट बाय फेमीली," वह बोला।

रीना ने प्रश्नात्मक निगाहों से उसे देखा।

वह हिचकते हुये बोला, "मैं जिन्दगी में नई दिशायें टटोल रहा हूँ। हिन्दू से क्रिश्चियन बन गया हूँ। मेरा नाम हरि - हरि कुमार।" कहते हुये उसका दांया हाथ आगे बढ़ गया।

रीना को उससे हाथ मिलाना पड़ा। "मैं रीना - रीना शर्मा," हाथ मिलाते हुये वह उसे घूरती गई... आखिर लोग गलत तो नहीं कहते। धर्मपरिवर्तन वास्तव में दुनिया में होता है।

किसी से व्यक्तिगत प्रश्न पूछना अभद्रता मानी जाती है मगर उसका परिचय पाकर रीना इतनी अधिक कौतूहल थी कि स्वयं को पूछने से रोक नहीं सकी, "आपने हिंदू धर्म क्यों छोड़ा?"

वह हल्के से मुस्कुराया, कुछ सोचते हुये बोला, "एक नये ज्ञान की खोज के लिये, एक नई जीवन शैली जीने के लिये।"

"मैंने सुना है कि क्रिश्चयन मिशनरियां इंडिया में छोटी जाति के गरीब लोगों को मामूली सा लालच देकर कनवर्जन के लिये उकसाती हैं। "

"ओ जीजस!" अब वह भड़क गया, "इसके लिये वह मिशनरियां नहीं बल्कि समाज दोषी है। लोग अपना धर्म क्यों बदलते हैं? जब वे अपनी वर्तमान स्थिति से खुद को सुरक्षित महसूस नहीं करते।"

कुछ देर की खामोशी के बाद वह व्यंग्य से मुस्कुराते हुये बोला, "आप अपने पूर्वजों के देश के विषय में काफी कुछ जानती हैं। आपने शायद वह खबर सुनी होगी – 'पॉच आदमी और एक गाय।' "

रीना ने इंकार में गर्दन हिलाई।

"यहॉ, हमारे इस देश में गाय को मारना एक निन्दनीय अपराध समझा जाता है। जो मारता है वह हत्यारा कहलाया जाता है। एक शाम हरियाणा जिले में पॉच आदमी, हमारे देश के कहलाये जाने वाले तथाकथित दलित एक गाय को मार रहे थे। उनका कहना था कि उस गाय को मेड-काऊ डिजीज हो गई थी। कुछ हिन्दू धर्मसंघियों ने उन्हें

देख लिया। बस उन्होंने झटपट आस-पास के गॉवों से भीड़ इकट्ठा की और 'गोमाता की जय' के नारे लगाते हुये उन पॉच दलितों को क्रूरता से मार दिया।"

एक पशु की जान की तुलना पॉच नरों से की गई ! पाश्विकता की इस हद पर रीना का कोमल दिल दहल गया। "इट इज ब्रूटल। आई कान्ट बिलिव डिस," वह विस्मय से बोली।

"यस इट इज ब्रूटल एंड रिडीकूलस वट सच। जो ये इधर-उधर बम धमाकेः हो रहे हैं वे सिर्फ धर्मो की वजह से। यहां आपका धर्म आपको मार सकता है। "

रीना खामोश हो गई।

उसे खामोश देख वह बोला, "क्या कहती हैं आप? क्या लोग अपने धर्मो के साथ सुरक्षित है?"

रीना के पास कोई जवाब नहीं था। अपने मूलदेश के इन अजीबोगरीब पहलुओं के सन्दर्भ में वह उससे और जानकारी लेना चाहती थी जहॉ धर्म समाज में एक विश्वास न होकर एक मिथ्या अभिमान बन जाता है, जिसके लिये लोग एक-दूसरे का वध करने से भी कतराते नहीं हैं। मगर सहसा एसएएस **168** फ्लाइट बोर्डिंग की घोषणा हो गयी। उन दोनों ने अपना-अपना सामान उठाया और अन्य यात्रियों के साथ लॉज से चल पड़े, बोर्डिंग प्लेस की ओर, जहॉ कांच दरीचें के पार अंधेरे में खड़ा एक विमान कोपनहेगन जाने के लिये तैयार था।

दैत्य की तरह गर्जन करता हुआ विमान हवाई पट्टी पर कस कर दौड़ा और तेज रफ्तार पकड़ते हुये धातू, कांच व रबड़ का वह अम्बार हवा का धकेलता हुआ उड़ गया। दिल्ली महानगरी की धरती छोड़, बादलों के भी बहुत ऊपर आ विस्तीर्ण खुले आकाश में उत्तरी-पश्चिमी दिशा की ओर बढ़ने लगा। एक लंबी सांस भरते हुये रीना ने सीट पर अपने को ढीला छोड़ दिया। "इंडिया..." ऑखे मूंद कर वहॉ बिताये अपने पॉच हफ्तों के विषय में सोचने लगी...। वहॉ रिश्तेदारों के संग बीते क्षण, चुहल व किस्से... उनका रहन-सहन, बात-व्यवहार, उनके मजाक, अंदाज व अदायें...। दिक-दिगन्त तक फैले भारतवर्ष के वे दर्शनीय स्थल जहॉ उसका जाना हुआ। पर्वतों पर चढ़ी, सागरतट पर टहली। रेगिस्तान देखा। आह...भूमंडल के उस भाग में सभी कुछ इतना भिन्न प्रतीत हुआ... मौसम, संस्कृति, लोग, इन्फरास्टक्चर... सब कुछ एकदम अलग जैसे वह किसी दूसरी दुनिया में पहुॅच गई हो...। यकायक वह डेनमार्क के विषय में सोचने लगी।

क्या वह उसका अपना देश है?

"नहीं," उसके अन्त:करण से आवाज उभरी। एक विडम्बना है। हालांकि वह जन्म से उस देश में रह रही है। डेनिश में धाराप्रवाह बतियाती है। डेनिश समाज में वह निधड़क विचरण करती है, जहॉ उसके कई डेनिश मित्र हैं मगर उसने स्वयं को डेनिश कभी नहीं समझा।

*"यू आर इंडियन। तेरा डेनिश पासपोर्ट महज एक कागज का टुकड़ा है जो तुझे इस देश में रहने की सहूलियत देता है, "*उसके घर वाले उसे जब-तब कहते रहते है।

इज सी इंडियन?

"वेयर डू यू कम फरोम?" डेनमार्क में अक्सर लोग उससे पूछते।

"इंडिया।"

उसे हैरत तब हुई कि भारत में भी वह जहॉ कहीं भी गई, हाट-बाजार, रेस्टोरेन्ट, या कोई पर्यटन स्थल... उससे यह सवाल किया गया - "वेयर डू यू कम फरोम?"

"इंडिया"

"अरे नहीं," लोग थोड़ा हंसते हुये, थोड़ा मुॅह निपोड़ते हुये कहते।

"अरे भई मैं इंडिया से ही हूॅ। देखो हिन्दी बोल रही हूॅ..."

"मगर एक्सेंट एकदम अलग है। एक्प्रेशन्स भी अलग हैं। हमारा मतलब तुम कहॉ रहती हो?"

हार कर वह जवाब देती, "डेनमार्क।"

"कहॉ है यह देश? कभी सुना नहीं।"

कुछ लोग, जिनका भूगोलिक ज्ञान अच्छा था, कहते, "डेनमार्क... जो दूध-दही और चीज के लिये बहुत फेमस है, राइट?"

"आपने क्या हिन्दू वेजीटेरियन मील के लिये ऑडर किया है?" उसके कानों में स्वर गूंजा। ऑखे खोली तो देखा कि परिचारिकाओं ने नाश्ता लगाना शुरू कर दिया है। सहमति में गर्दन हिलाते हुये उसने परिचारिका के हाथों से चुपचाप फूड ट्रे पकड़ ली। मगर वह ख्यालों में खोई रही। उसे एयरपोर्ट पर मिले उस युवक का ध्यान आ गया। क्या नाम था उसका? हरि। वह किनारे विन्डो सीट पर बैठी थी और वह उससे दो पंक्ति आगे बीच की ऐक्सिल सीट पर। उसने उसकी तरफ देखा। वह शायद डेनमार्क के विषय में कोई गाइडबुक पढ़ रहा था।

रह-रह कर रीना उसकी तरफ देखती गई। कुछ क्षण बाद उसे आभास हुआ कि किताब तो उसने एक तरफ रख दी और वह कुर्सी पर ढुलक गया। उसका हुलिया बता रहा था कि उसकी तबियत कुछ खराब हो रही है। उसने उसे भूरे रंग के लिफाफे का उपयोग करते हुये देखा, कानों में रूई ठूसते हुये देखा। सम्भवत: वह पहली बार हवाई यात्रा कर रहा है। कई बार उसने उसे अपनी सीट से उठ कर लेवोरेटरी की तरफ जाते हुये देखा। विमान परिचारिकाओं को उसकी सीट पर आते-जाते देखा। हवाई यात्रा के दौरान मिले नाश्ते व भोजन में से उसने कुछ खाया भी नहीं। रीना को उससे सहानुभूति होने लगी...। पुवर चैप!

सात घंटे और पच्चपन मिनट वे आकाश में रहे और जब एसएएस एयरप्लेन डेनर्माक पहुॅचा तो आकाश में सूरज चमक रहा था। लोकल टाइम, सुबह के साढ़े छ:। भारत का टाइम, सुबह के दस। एयरपोर्ट पर यूरोपीय यात्रियों के लिये अलग कतार और गैरयूरोपीय के लिये अलग। डेनिश पासपोर्ट होने की वजह से रीना को इमीग्रेशन काउन्टर पर समय नहीं लगा। लेकिन हरि के पासपोर्ट व उसके मिशनरी सम्बन्धित कागजों को लेकर इमीग्रेशन अधिकारी सशंकित हो गये। यात्रा में तबियत बिगड़ जाने की वजह से वैसे ही उसका शरीर ढीला पड़ा था, फिर दस्तावेजों की इस कड़ी तहकीकात से वह और भी घबरा उठा। बेबसी से वह बार-बार रीना को ताकता गया। *'प्लीज हेल्प मी।*

रीना को उस पर दया आ गई। वह उसे अकेला छोड़ कर नहीं जा सकी। इमीग्रेशन के पार गेलरी में खड़े होकर उसका इन्तजार करने लगी।

काफी देर, लगभग पौन घंटे बाद उसके पासपोर्ट पर मुहर लगी और उसे अपना पासपोर्ट व अन्य कागजात काउन्टर से वापस मिले। इमीग्रेशन काउन्टर से जब वह बाहर निकला उसके साथ रीना ने भी राहत की सांस भरी।

दोनों लगैज-क्लेम पर आ गये। उनका सामान वाहक पट्टे से कभी का नीचे उतर गया था और जमीन पर परित्यक्त सा पड़ा था। दोनों ने ट्रोलियों में अपना-अपना सामान लादा व निर्गम द्वार की तरफ बढ़ गये।

निर्मल शर्मा अराइवल पेसेज में खड़ा बड़ी बेसर्बी से अपनी बेटी का इन्तजार कर रहा था। उसे देखते ही उसके चेहरे पर राहत के भाव आये। मगर एक झुंझलाहट से बोला, "एसएएस फ्लाइट कभी की लैंड कर चुकी है। तुझे बाहर आने में इतनी देरी क्यूं हुई?"

'हाय पॉप! आई एम बैक..." कहते हुये रीना अपने पिता से लिपट गई। निर्मल को एक शर्मिंदगी महसूस हुई कि उसकी बेटी पॉच हफ्तों बाद लौट कर आयी है और वह उससे गुस्से से बात कर रहा है। स्नेह से वह उसके सिर सहलाने लगा, उसके माथे को चूमा। उसकी पीठ थपथपाते हुये बोला, "आफटर ऑल यू हेव मेड इट। तुझे भारत अकेला भेजते हुये मुझे इतना डर लग रहा था...। फिर वे बम विस्फोट सुनकर तो इतना डर गये हम...। लेकिन तू अकेले गई और घूम आयी, वाह!"

उमर के दो दशक पूर्ण करने के बावजूद उसके माता-पिता उसे अभी भी एक असहाय बच्ची समझते थे जो उसे कतई पसन्द नहीं आता था। वह भड़की, "पहले तो मैं एक छोटी बच्ची नहीं हूँ, फिर आप भारत को क्या समझते हो? क्या वह एक जंगल है जो मैं वहाँ गुम हो जाती?"

"भारत एक जंगल तो नहीं मगर बहुत बड़ा और रहस्यमय है। उस देश में किसी के साथ कुछ भी हो सकता है," निर्मल हंसते हुये बोला।

"बिल्कुल सच कहा सर," हरि ने उसकी बात में हाँ में हाँ मिलाई तो निर्मल का ध्यान उसकी तरफ गया। आँखे सिकोड़ कर उसने उसे घूरा। हरि ने मुस्कुराने का प्रयत्न किया। सहसा निर्मल ने महसूस किया कि उसकी लड़की अकेले एयरपोर्ट से बाहर नहीं निकली है।

रीना ने तुरन्त हरि का परिचय अपने पिता को दिया। दोनों आदमियों ने बड़ी ही शिष्टता से आपस में हाथ मिलाये।

"आपके मिशन को मालूम है आपके यहाँ पहुँचने का? " रीना ने हरि से पूछा

वह कोई जवाब नहीं दे सका। वह अभी तक सुस्त सा था।

"वे नये स्टुडेन्ट्स के लिये कोई ओरियन्टेशन प्रोग्राम नहीं रख रहे?"

"**31** जुलाई को था पर मेरा वीसा तब तक तैयार नहीं था।"

रीना सुझाते हुये बोली, "आप उन्हें फोन कर लीजिये। उन्हें बता दीजिये कि आप यहाँ पहुँच गये हैं।"

निर्मल ने झट से अपना मोबाइल उसकी ओर बढ़ा दिया। "थैंक्यू," बुदबुदाते हुये हरि ने ढीले हाथों से फोन पकड़ा, कंपकंपाती उंगली से मिशन का नंबर दबाया, जो उसे मुँहजुबानी रटा था।

"*गुड डे ! डी इय कोपनहेगन बाइबिलट्रेनिंग्स सेंटर। माँ आई येल्प डाई,*" दूसरी छोर से किसी महिला का स्वर कोंधा।

"मैं यह भाषा नहीं समझता," कहते हुये उसने फोन एकदम से रीना की तरफ बढ़ा दिया।

फोन पकड़ कर रीना ने खुद मिशन की सेकेटरी से उसके विषय में बातचीत की।

"ए स्टुडेंट फरोम इंडिया?"

"यस।"

सेकेटरी ने दो-तीन बार उससे उसका पूरा नाम बुलवाया, इस्पेलिंग बुलवाई।

"हरि कुमार - एच ए आर आई के यू एम ए आर।"

"हारी खुमार?"

" यस प्लीज।"

सेकेटरी कंप्यूटर पर चैक करते हुये बोली, "यहाँ तो ऐसी कोई सूचना नहीं है कि इंडिया से कोई हारी खुमार यहाँ आने वाले हैं।"

माऊथपीस पर हाथ रखते हुये रीना हरि से बोली, "उन्हें तो आपके आने के विषय में कुछ पता ही नहीं। वे आपके नाम तक से परिचित नहीं।"

वह और मायूस हो गया। सहारे के लिये उसने एक स्तम्भ पकड़ लिया। "एक मिनट जरा," सेकेटरी बोली, "मैं यहाँ और लोगों से पूछती हूँ।"

रीना फोन थामे इन्तजार करने लगी। फोन पर कोई आध्यात्मिक धुन बजने लगी थी। निर्मल और हरि उसका चेहरा ताकते रहे। सेकेटरी पूरे पांच मिनट बाद फोन पर वापस आयी, यह कहने के लिये, "सॉरी। मैं आपकी कोई मदद नहीं कर सकती हूँ। यहाँ किसी के भी पास ऐसी कोई सूचना नहीं है।"

"मगर उनके पास आपके मिशन के तमाम पत्र हैं। वो आपके बुलाने पर ही यहाँ आये हैं। वो कहाँ जायेंगे?"

एक क्षण की अन्यमनस्कता के बाद सेकेटरी ने सुझाया, "हमारे सेंटर का एक ऑफिस नोरबरोगेड पर भी है। तुम वहाँ कोशिश कर सकती हो। शायद उन्हें कुछ मालूम हो।"

"वहॉ का फोन नंबर?"

सेकेटरी नंबर देने लगी तो रीना माऊथपीस पर हाथ रखते हुये अपने पिता व हरि से बोली, "पेपर प्लीज।"

हरि ने तुरन्त एक कागज और पैन अपने बैग से खींचा और रीना की तरफ बढ़ा दिया। सेकेटरी द्वारा बोले गये तीन फोन नंबरों को रीना ने अंकित किया, पुष्टि के लिये उन्हें दौहराया और फिर थैंक्यू कहते हुये फोन बंद कर दिया। हरि की हालत अब और भी पस्त थी। निर्मल ने उसे घूरा - धंसे कन्धे, मायूस चेहरा, खम्बे से टिका वह कुछ सोच रहा था। निर्मल को उस पर तरस आ गया। सहसा हरि उसे उसके आरम्भिक दिनों की याद दिलाने लगा... जब वह नया–नया कोपनहेगन आया था - कितना पराया व आक्रान्त प्रतीत हुआ था उसे सभी कुछ...। कितने संघर्ष करने पड़े थे उसे इस देश में स्वयं को बसाने के लिये।

अपनी बेटी को सुझाते हुये वह बोला, "रीना, इन्हें पहले अपने घर ले चलो। ये नहायेगें-धोयगें, कुछ खायगें-पियेगें, इनके शरीर में कुछ ताकत आयेगी। फिर घर से ही फोन करके पता लगाते हैं कि इन्हें पहुँचना कहॉ है।"

रीना ने हरि की तरफ देखा। उसने सहमति में गर्दन हिलादी। विदेश की वीरानी में अजनबियों के बीच जिन्दगी शुरूवात करने का यही तरीका उसे सबसे उचित लगा।

"तो चलिये," रीना उससे बोली।

खम्बा छोड़ कर व अपनी ट्रॉली धकेलते हुये वह उनके पीछे चल पड़ा।

एयरपोर्ट के बाहर आये तो स्फूर्तिदायक ठंडी ताजी आबोहवा ने उनके तन व मस्तिष्क को एकदम से सहलाया। चारों तरफ साफ-सुथरी सड़कों पर प्यार से नजरे घुमाते हुये रीना बुदबुदाई, "माय कोपनहेगन! भारत में बहुत कुछ था मगर यह फ्रेस एयर व क्लीन रोड्स का अभाव था।"

वे पार्किंग प्लेस की तरफ बढ़ गये, पीछे-पीछे हरि। निर्मल रीना की सुजुकी लेकर आया हुआ था जो उसके बीसवें जन्मदिवस पर उसने व सुधा ने उसे भेंट की थी। कार दो दशक पुराने मॉडल की थी जो उन्हें एक मित्र से मात्र दस हजार क्रोनर में मिल गयी थी। मगर रीना की अपनी कार थी, जिसका उसे बेहद अभिमान था।

"हाय सुजुकी, हाऊ आर यू? " रीना अपनी कार में हाथ फेरते हुये बोली।

"चलानी है?" निर्मल चाबी बढ़ाते हुये उससे बोला।

"मैं !" रीना आश्चर्य से बोली, फिर दूसरे ही पल उसका कार चलाने का मन करने लगा। इंडिया में पॉच हफ्तों तक उसने कोई वाहन नहीं चलाया था। चाबी लेकर उसने गाड़ी खोली, स्टेयरिंग व्हील के पीछे बैठी। इतने दिनों बाद अपनी कार का स्पर्श उसे अच्छा लग रहा था। निर्मल उसकी बगल में, और हरि अकेला पीछे की सीट पर पसर गया।

"कैसा लगा भारत?" कार में बैठते ही निर्मल ने अपनी बेटी से पूछा।

"बहुत अच्छा। हमारे काफी रिश्तेदार वहॉ सुन्दर व बड़े घरों में रहते हैं, साथ में नौकर-आया।"

"घरेलू काम-काज करने वाले नौकर वहॉ बहुत सस्ते मिल जाते हैं," निर्मल तल्ख भाव से बोला। "यह तो इन पश्चिम देशों में श्रम बहुत मंहगा है।"

"लोग वहॉ उत्साही व सर्गम हैं। मेरा इतना ख्याल रखते थे...। खास कर दादीजी। जो कुछ प्यार वह आपके लिये महसूस करती हैं उन्होंने मुझ पर उड़ेल दिया। पर गर्मी वहॉ जानलेवा पड़ रही थी। उफ्..."

"तू जब वहॉ जून-जुलाई में गई तो गर्मी तो वहॉ खानी ही थी। तूने क्या सोचा था वहॉ स्नेफॉल हो रहा होगा! "

"नहीं-नहीं, ऐसी बात नहीं है। गर्मियां मैंने स्पेन और इटली में भी देखी है पर इण्डिया में तो कुछ और ही था... गर्म ऑवन। भट्टी। बट नेवर माइन्ड। मैंने वहॉ मजा भी बहुत किया - मसाज करवाया, फैशियल करवाया।"

निर्मल ने गर्दन मोड़ कर एक पल अपनी बेटी के चेहरे पर ताका। उसका चेहरा ट्रैन्ड पर फ्रेस लग रहा था। और उसने एक नया हेयरकट भी करवा रखा था।

"यू आर लुकिंग नाइस," वह बोला।

"थैंक्स। मैंने अपनी फिटिंग के वहॉ बहुत सारी ड्रैसेज सिलवायी। ब्यूटी पार्लर व टेलर तो वहॉ बहुत सस्ते हैं - लग्जरी जैसे लगते हैं। और मैंने वहॉ बहुत सारे मौसमी फल खाये। बाजार वहॉ आम से भरे थे।"

"आम... । कभी-कभी मैं यहॉ अपने देश के फल और सब्जियां बहुत मिस करता हूॅ," निर्मल आहिस्ते से बोला। "कददू, लोंकी, टिंडा, परवल... इंडिया में मैं इन सब्जियों को छूता तक नहीं था। यहॉ इन्हें खाने के लिये तरस जाता हूॅ।"

"दादीजी ने आपके लिये कददू, लोंकी तो नहीं पर आम भेजे हैं। आगरा का पैठा भेजा है और मथूरा के पेड़े। और भी बहुत सारे उन सभी ने आपके, मम्मी और नैना के लिये गिफ्ट भेजे हैं। बुआ ने आपके लिये अपने हाथों के बुने दो स्वेटर भिजवाये हैं, एक फुल स्लिव का, एक हाफ स्लिव का। वो निटिंग में एक्सपर्ट लगती हैं।"

निर्मल को अपनी जुड़वा बहन का ध्यान आ गया। चेहरे पर भीनी मुस्कान खिंच गई। खोये स्वर में बुदबुदाया, "क्यों करती है उषा मेरे लिये इतना कुछ !"

रीना स्टेयरिंग व्हील घुमाते हुये बोली, "बुआ भी ऐसे ही कह रही थी जब मैंने आपका भेजा डीवीडी प्लेयर उन्हें थमाया कि आप इतना कुछ उनके लिये क्यों करते हैं !"

"अच्छा! और क्या कहा उषा ने?" निर्मल ने उत्सुकता से अपनी बेटी से पूछा।

"बहुत कुछ... कि मॉ के पेट से लेकर बड़े होने तक आप दोनों का बहुत गहरा साथ रहा। पर अब आप उनसे कोसों दूर रहने चले गये...। वह उधर पर्वतों से घिरी घाटी देहरादून में और आप इधर समुद्र से घिरे तट कोपनहेगन में। मोहना में दादीजी ने आपके व बुआ के बचपन की कितनी बातें मुझे बताई। वह स्कूल भी दिखाया जहॉ आप व बुआ एक साथ पढ़ते थे। मैंने उस स्कूल में आपकी कल्पना की। सच पापा, सोच कर हैरानी हुई कि आप भी कभी एक बच्चे थे। दादीजी के किस्सों के अनुसार बड़े शरारती बच्चे थे आप! "

निर्मल खिलखिला कर जोरों से हंस पड़ा। फिर एकाएक गंभीर होकर पूछने लगा, "कैसे हैं मॉ, पिताजी?"

"ठीक हैं पर बहुत ही बूढ़े दिखने लगे, जैसे स्टोन ऐज के हो।। कहने के लिये तो ताऊजी की वजह से दादाजी और दादीजी को अकेलापन नहीं है, वे उनके बुढ़ापे का सहारा माने जाते हैं। मगर मुझे वहॉ ऐसा लगा कि दादीजी की ताई से बिल्कुल नहीं पटती। ताई दादीजी के लिये एक सहारा नहीं, बल्कि तनाव है।"

निर्मल अपनी बेटी के मुख से ऐसी बातें सुनकर गंभीर हो गया। सोच में पड़ गया। इस बात का उसे जबरदस्त मलाल रहता था कि वह अपने माता-पिता से कोसों दूर हैं। शारीरिक तौर पर वह उनकी कोई सेवा नहीं कर पाता। बस कभी-कभार उन्हें चैक भेज दिया करता है। पर क्या पैसा सब कुछ होता है?

पीछे सीट पर गुमसुम बैठा हरि उनकी बातें सुन रहा था। वह अभी उन्हें ही बहुत कम जानता था तो उनके रिश्तेदारों को वह क्या जानता।

"और पापा, यहॉ सब कुछ ठीक है - अपने कोपनहेगन में?" रीना ने प्रश्न कर अपने पिता की तन्द्रा भंग की। "एनी न्यूज हियर?"

"एनी न्यूज?" सांस भरते हुये निर्मल बोला, "सब कुछ ठीक-ठाक ही है... बस..."

"बस क्या?"

"सुरेश और लिंडा डायवोर्स हो गया।"

"ओ... नहीं पैच-अप कर पाये वे?"

"नहीं।"

"ओ...हांलाकि यह मालूम था पर बहुत ही खराब लग रहा। हा... इट इज वेरी सेड!" कहते हुये स्टेयरिंग व्हील से रीना का हाथ मुॅह पर चला गया। एक उदासी उसे घेरने लगी। दबे हुये प्रश्न फिर से जेहन में कुलबुलाने

लगे। कैसे? कैसे सुरेश मामा और लिंडा का तलाक हो गया...? वे दोनों तो एक-दूसरे से बेहद प्यार करते थे... । लव मैरीज की थी उन्होंने।

उनके बच्चों का ख्याल कर उसका मन और विषाद से भर गया। क्या प्रभाव पड़ रहा होगा अतुल व विपुल पर अपने माता-पिता के तलाक का...। सुरेश मामा तलाक को किस रूप में ले रहे होगें? और लिंडा...। लिंडा से वह एक विशेष अनुबन्ध महसूस किया करती थी। परिवार में मात्र लिंडा व वह ही जन्म से डेनिश थे। बाकियों ने बाद में डेनिश नागरिकता अपनाई थी, अपनी सहूलियत के लिये। लिंडा अक्सर उसे कहती भी थी - रीना तुम और मैं दोनों डेनिश हैं, भारतीय आचार-विचारों को समझने की चेष्टा करते हुये।"

"बच्चों की कस्टडी किसे मिली?"

"लिंडा को पर सुरेश को भी हर हफ्ते अपने बच्चों से मिलने का अधिकार है।"

"लिंडा से अब हमारा क्या कोई रिश्ता नहीं रहेगा...?" अपने पिता से उसने हताश स्वर में पूछा।

"लिंडा से एक रिश्ता इस परिवार का हमेशा रहेगा कि वह अतुल व विपुल की मॉ है...।"

ः 2 ः

गोविन्द प्रकाश शान्डिल्य जब अपना घर, जमीन, जायदाद, रिश्तेदार, पत्नी, बच्चे व अपने देश के तमाम अबूझ पहलुओं को छोड़कर पानीपत से कोपनहेगन विस्थापित हुये तो उनके साथ थी सिर्फ उनकी प्रतिभा, अनुभव व एक नई अन्जानी जगह में जिन्दगी की शुरूवात करने की चाहत। विदेश जाने की उनकी सनक को उनके घर वालों ने उनका पागलपन करार दिया था, और उनकी पत्नी कमला, जिसने एक हफ्ते पूर्व ही उनके तीसरे बच्चे को जन्म दिया था, ने आंसुओं से डबडबाती ऑखों से उनसे विनती की कि वो उसे छोड़ कर इतनी दूर न जाये। मगर उनका इरादा अटल था। दरअसल तीसरे बच्चे के जन्म से उनका मन घबराने लगा था। वे वहां से कहीं दूर भाग जाना चाहते थे जहां वह अपने लिये कोई ढंग का रोजगार जुटा सके, अपने बच्चों को बेहतर जिन्दगी बख्स सके।

चन्द डॉलर जेब में व एक बैग कन्धे में लटका कर, अपनी कच्ची गृहस्थी छोड़कर एक शाम वो अपने हमउम्र - पच्चीस से तीस वर्ष - युवकों के दल के साथ बंबई बन्दरगाह से बासरा (इराक) के लिये रवाना हुये। बंबई से बासरा तक की हफ्ते भर की यात्रा तय करता हुआ, कई बन्दरगाहों को छूता हुआ जहाज अरब महासागर को पार कर ओमान खाड़ी में प्रवेश हुआ। एक हफ्ता बासरा में बिता गोविन्द प्रकाश का दल बस, रेल व नाव द्वारा कई यूरोपीय देशों - टर्की, बुलगारिया, यूगोस्लाविया, ऑस्ट्रीया व जर्मनी - में अनधिकार प्रवेश करते हुये अन्ततः इंग्लैण्ड पहुॅचा। जबसे उन्होंने अपना पानीपत छोड़ा था रहने-खाने के लिये जगह-जगह गुरूद्वारे की शरण ले रहे थे। नसीब से गुरूद्वारे उन्हें टर्की तक मिले। टर्की के बाद जब गुरूद्वारे मिलने बंद हो गये तो यात्रा और कठिन हो गई थी। कभी-कभी पूरा दिन लड़कों ने मीट के एक टुकड़े पर निर्वाह किया।

बहरहाल उनका आरम्भिक लक्ष्य इंग्लैण्ड पहुॅचना था। वे इंग्लैण्ड पहुॅचे भी, मगर इंग्लैण्ड पहुॅचते ही गोविन्द शान्डिल्य डिपोर्ट हो गये। इंग्लैण्ड में सिर्फ उच्च शिक्षित युवकों की ही मॉग थी। मगर अब तक डेनमार्क का नाम इन लड़कों के कानों पर पड़ चुका था कि उस देश का पोर्ट अभी एक फ्री पोर्ट है। वहॉ बीसा वगैरह की जरूरत नहीं। **1966** का समय था वह...। डेनमार्क में औद्योगिककरण इंग्लैन्ड के बाद आया था। डेनमार्क को आवश्यकता थी फैक्टरी व इंडस्ट्री में काम करने वाले मजदूरों की। सो इंग्लैण्ड से दुत्कारे जाने के बाद गोविन्द शान्डिल्य डेनमार्क आ गये, यहॉ कुछ वर्ष रह कर दौलत कमाने के इरादे से।

तीसरा दिन था उन्हें डेनमार्क पहुंचे...। सड़क पर वो यूं ही चल रहे थे तो एक कुकिज फैक्ट्री के सामने से गुजरे। एक पल ठहर कर उन्होंने बोड पढ़ा, फिर अन्दर घुस गये। अपनी टूटीफूटी अंग्रेजी में पूछने लगे कि उन्हें कोई वर्कर चाहिये। फैक्ट्री के मालिक के साथ थोड़ी देर का इन्टव्यूह हुआ और उन्हें वहां में जॉब मिल गया। सभी तरह के काम करते वो फैक्ट्री में - बेकिंग करना, पेंकिग करना, चाय-कॉफी बनाना, झाड़ू लगाना, बर्तन धोना...। फुरसत के पलों में वो बियर का ग्लास थामे अन्य वर्करों का अपने बॉलीवुड फिल्मों के गीतों से मनोरंजन भी किया करते।

शुरू में तो वो पॉच अन्य विकाशील देशों से आये आदमियों के साथ मजदूरों के एक ऐसे दड़बे में रहे जहॉ सिर्फ एक लकड़ी का चकौर फर्श व इलैक्ट्रिक स्टोव था। सभी आदमियों का उठने का समय अलग-अलग, शाम को घर लौटने का समय अलग-अलग। सभी अपनी-अपनी भाषायें बोलते। सभी की भिन्न-भिन्न भौजन शैलियां। घोर संघर्षमय समय था वह... फिर भी गोविन्द प्रकाश संतुष्ट थे, खुश थे। अगर वो दिन भर श्रम करते तो शाम को उनकी जेब में पैसे होते, अच्छा खाना खाने के लिये, मनोविनोद के लिये। यहॉ घृणा, नफरत, असंतोष, आक्रोश, पक्षपात व स्पर्धा नहीं थी। कहीं भी कुछ अशोभन व अन्यायपूर्ण नहीं दिखता था। सभी कुछ नियमतः व न्यायपूर्ण लगता था। हां कुछ श्रेणी का रेसिजम था पर वह एक छोटा सा मूल्य था चुकाने के लिये बदले में जो उन्हें नसीब हो रहा था।

कुछ समय बाद जब गोविन्द प्रकाश ने कुछ जोड़-बटोर लिया और वे कुकिज फैक्ट्री से शिप फैक्ट्री में पहुंच गये तो मजदूरों के उस दड़बे को छोड़ कर वो एक दो कमरों के फ्लैट में शिफ्ट हो गये। वो एक कर्मशील इन्सान थे। भारत में रहने वाले उनके रिश्तेदार मददगार। सो डेनमार्क पहुँचने के दो साल के भीतर ही उन्होंने अपनी पत्नी को तीनों बच्चों समेत भारत से हवाई जहाज द्वारा अपने पास बुला लिया। उस समय उनके तीन बच्चे, एक लड़की व दो लड़के - सुधा, सुभाष व सुरेश - क्रमश: ग्यारह, छ: व दो वर्ष के थे।

सो, पहले उन्होंने अपना देश छोड़ा, फिर देश की नागरिकता। लेकिन जो वे ताउम्र नहीं छोड़ पाये, वह अपने देशीय संस्कृति व परंपरायें। समय बड़ी तेजी से गुजरा। सुधा, सुभाष व सुरेश बड़ी जल्दी ही बड़े हो गये। लड़की मां की तरह कद में नाटी गई और दोनों लड़के पिता की तरफ छ: फुटे लंबे। गोविन्द प्रकाश व कमला, जो खुद बहुत पढ़े-लिखे नहीं थे, अपने बच्चों को पढ़ाने में उन्होंने कोई कसर नहीं छोड़ी। तीनों बच्चों ने उच्च शिक्षा प्राप्त की, तदुप्रांत अच्छी नौकरियां हासिल की। फिर आया शान्डिल्य दम्पति के लिये सबसे जटिल पहलू - बच्चों के लिये वर व वधू की तलाश।

डेनमार्क में एक लंबे अरसे से रहने व डेनिश नागरिक बन जाने के बावजूद शान्डिल्य दंपती डेनिश संस्कृति से अनुकूलन नहीं कर पाया। अन्त:करण की गहराई में वे भारतीय ही बने रहे। डेनमार्क एक सुनियाजित व सुरक्षित देश था मगर उन्हें दहशत हुई तो वहॉ की संस्कृति से, जो उनकी मान्यता के अनुसार अत्यधिक स्वछन्द थी। उन्होंने भरसक कोशिश की उनके जवान हो रहे बच्चें अपने भारतीय धारणाओं व पद्धतियों पर भरोसा कर सके। वे पूर्णत: तो नहीं मगर आशिंक तौर पर अवश्य सफल रहे।

उनकी बेटी सुधा विदेश में रहने व गोरी लड़कियों के साथ उठने-बैठने के बावजूद इस विश्वास के साथ बड़ी हुई कि विवाह के सन्दर्भ में उसके माता-पिता का चुनाव उसके लिये सर्वोत्तम होगा, और उसे उस लड़के के साथ पूरी जिन्दगी बितानी पड़ेगी। गोविन्द प्रकाश व कमला ने सुधा का विवाह भारत बसे एक नवयुवक निर्मल शर्मा से किया, जो सुधा का पति बनकर बेझिझक अपना हिन्द छोड़ कर हमेशा के लिये डेनमार्क आ गया।

बड़ा लड़का सुभाष, जिसके पास लड़कियों का पीछा करने व डेटिंग करने की प्रवीणता कम थी, अपने मातापिता पर आश्रित रहा कि वे ही उसके लिये कोई लड़की ढूंढेगें और उस लड़की से वह जिन्दगी भर प्यार करेगा। शान्डिल्य दंपती हिन्दुस्तान से आशा नामक एक साधारण व सुशील लड़की को उसकी दुल्हन बना कर ले आये। सुभाष व आशा यद्यपि दो भिन्न परिवेशों में पले-बड़े थे मगर वैवाहिक रूपी कारावास के वे दो खुशहाल कैदी बन गये। आशा ने डेनिश भाषा सीखी, अपनी योग्यता व अनुभव के दम पर डेनमार्क में नौकरी भी खोजी— *बॉर्नहैव* में *पेडागोगिकयेल्पर* - किन्डरगार्डन में बच्चों की देख-रेख का काम। उनके खुद के दो बच्चे हुये—एक लड़का और एक लड़की। सुभाष व आशा को देख कर सभी को यही लगता था कि वे दोनों एक खुशहाल युग्ल है, वैवाहिक जीवन का भरपूर आनन्द लूट रहे हैं।

बहरहाल शांडिल्य दम्पति का छोटा लड़का सुरेश उनके दो बड़े बच्चों से भिन्न था—रूप और व्यवहार दोनों में। कद बहुत ही लंबा व रंग एकदम सांवला - स्मार्ट, एथलीट देह। यह लड़का उनका विशिष्ट था और हमेशा उनके लिये परेशानी का कारण बना रहा। लोफर जैसे लड़कों से उसकी दोस्ती बनी रहती। लड़कियों को चैज करने में माहिर। जिन्दगी के बारह वर्ष गुजारने के बाद से ही लड़कियों से उसकी दोस्ती। लड़कियों के फोन आते, डेटिंग के निमन्त्रण आते। शांडिल्य दम्पति अपने लड़के के सुन्दर युवापन में गर्वित होते कि कैसे गोरी व कोमल चेहरों वाली लड़कियां उस पर फिदा रहती हैं। मगर साथ ही उसकी कई हरकते उनके लिये पचानी मुश्किल हो जाती... मसलन कई बार वह पूरी रात घर से गायब रहता, तो कई दफा सुबह उसके कमरे में जाने से कोई ब्लोन्ड बालों वाली लड़की उसके साथ सोयी मिलती।

खैर...। कई लड़कियां सुरेश की जिन्दगी में आयी और गई। उसने किसी के साथ सीरियस डेटिंग नहीं की। मगर जब वह युनिवर्सिटी में पहुँचा तो एक ऐसी डेनिश लड़की उसके सम्पर्क में आयी जिसके साथ उसने अपनी जिन्दगी के न केवल बारह वर्ष व्यतीत किये बल्कि उससे विवाह भी किया और उससे उसके दो बच्चे भी पैदा हुये। एक डांस क्लब में वे पहली बार मिले थे...। तब सुरेश डीटीयू से कंप्यूटर सांइस की पढ़ाई कर रहा था, लिंडा एक

डिप्लोमा स्कूल से सेकेटरियल का कोर्स। लिंडा की संगमरमरी गोरी देह, सुनहले बाल व हरी आंखों ने सुरेश को सहज ही आकर्षित कर दिया। वह भी उसकी सांवली त्वचा, काले केश व चमकदार काली-भूरी ऑखों पर मुग्ध हो गई। उसे सुरेश ऐशियन पुरूषों की सुन्दरता के मानदण्डों पर पूर्णतय: खरा उतरने वाला नवयुवक लगा। उस प्रथम आकर्ष ण का प्रभाव इतना गहरा था कि डांस क्लब के फर्श से वे सीधे लिंडा के छोटे से फलैट में रात गुजारने चले गये।

कुछ दिनों बाद सुरेश ने अपने माता-पिता के घर से अपना सारा सामान समेटा और उनका बड़ा सा घर छोड़ कर लिंडा के साथ उसके छोटे व तंग फ्लैट में रहने लगा। गोविन्द व कमला बौखलाये। भारतीय मान्यता के अनुसार एक लड़का व लड़की किसी अन्य समझौते के साथ नहीं रह सकते, सिवाय विवाह के। उन्होंने उसे धिक्कारा कि वह उनके पारम्परिक मूल्यों का उपहास बना रहा है, कभी से। और अब तो हद हो गई।

"बुलशिट! क्या है हमारे पारम्परिक मूल्य?" उसने उलाहना दी। "हिन्दू देवी-देवताओं की शाश्वतता में यकीन, व्रत-उपवास में श्रृद्धा, गंडे-तावीजों में भरोसा, पारलौकिक जीवन में विश्वास, और शादी से पहले यौन सम्बन्धों पर पूर्ण निषेध। मैं इन्हें रत्ती भर भी ऐवज नहीं देता।"

माता-पिता की सभी आपत्तियों व शिकायतों को सुरेश ने पूर्णतय: उपेक्षित कर दिया जैसे वे सिर्फ एक बैकग्राउण्ड शोर हो। उसे बस अब लिंडा ही चारो तरफ दिखाई देती, बाकी सभी रिश्ते अदृश्य। एक सम्मोहित आनन्द में वह उससे बंध चुका था। मगर उसके साथ उसे शादी की रस्मों में बँधने के लिये पांच साल लगे। दरअसल लिंडा की प्रेगनेन्सी के बाद जब एक नई मासूम जिन्दगी का प्रश्न उनके बीच खड़ा हो गया तो उन्होंने शादी करके अपने रिश्ते में समाज व कानून की मान्यता की मुहर लगाई। बच्चे कहीं 'हरामी' न कहलायें।

वैवाहिक जीवन सुरेश व लिंडा का ऐसा ही शुरू हुआ जैसा हर किसी का होता है। शुरू में सभी कुछ सुन्दर व सुमधुर। वे एक-दूसरे के सहयोगी, जीवनसाथी। विवाह के पांच वर्षो के अन्तराल में लिंडा ने दो बेटों को जन्म दिया। पति की इच्छानुसार पुत्रों को भारतीय नाम दिये गये— अतुल और विपुल। वे बेहद खुश थे ऐसे सुन्दर बालकों को पाकर और अच्छे माता-पिता बनने का भरसक यत्न कर रहे थे। लेकिन... ।

बहुत समय नहीं लगा जब विवाह के बाद कई तरह के विवाद उनके बीच पैदा हो गये। लिंडा चेन स्मोकर थी। शुरू में सुरेश बड़े प्यार से सिगरेट सुलगा कर उसकी नाजुक, कोमल उगंलियों में थमाया करता। उसके सिगरेट के कश, उसके नथूनों से उड़ता धुंआ, धुंये के परे उसकी गहरी हरी ऑखों की खामोश, मादक दृष्टि उसे मदहोश कर देती। लेकिन जिन्दगी इन सभी नाजुकताओं व अदाओं से परे है। जिन्दगी का असली धरातल कठोर है। बाद-बाद में लिंडा की सिगरेट की लत उसे बुरी तरह चिढ़ाने लगी।

"तुम इसे छोड़ने की कोशिश तो करो। सिगरेट पीना एक व्यक्तिगत मसला नहीं होता। तुम्हारे साथ हमें भी निकोटीन का विषेला धुंआ निगलना पड़ता है। मेरी फिक तो तुमने कभी की नहीं, कम से कम अब इन बच्चों की तो फिक करो। सिगरेट का धुंआ इनके कोमल फेफड़ों के लिये खतरनाक है - पॉइजन है।"

कभी वह सुनाता, "तुम सिगरेट के धुंये के साथ अपनी सारी कमाई उड़ा देती हो। मुझे अकेले ही घर का सारा खर्चा चलाना पड़ता है।" वह एक टेलीफोन कंपनी में इंजीनियर था। लिंडा एक डाक्टर की प्राईवेट सेकेटरी। दोनों के वेतन में अन्तर था। मगर लिंडा के शौक मंहगे थे, जिनकी पूर्ति में उसकी अपनी सारी तन्खाह निकल जाती थी।

अपने धैर्य की एक सीमा तक लिंडा उसकी बड़बड़ाहट को लापरवाही से लेती, फिर वह भी कस कर चिल्लाने लगती, जिसकी परिणति पति-पत्नी के बीच घिनोनी, उग्र बहस में हो जाती।

दूसरी बात यह थी कि लिंडा सभी जगह पति के साथ जाने में विश्वास नहीं रखती थी। उसका अपना एक निजी मित्र मंडल था जिसमें सुरेश कभी भी आमंत्रित नहीं होता था। बल्कि जब लिंडा अपने मित्रमंडल के साथ मेल-मिलाप कर रही होती थी तो सुरेश को बिना किसी खीज या बड़बड़ाहट के एक आदरयुक्त दूरी रखनी पड़ती थी।

किशमस उनके लिये एक अलग दर्दनाक पहलू था...। हर किशमस लिंडा अपने मायके के लोगों के साथ ही मनाना चाहती थी। सुरेश चाहता था, जैसे इन मुल्कों का रिवाज भी है, कि एक वर्ष किशमस अगर वे लिंडा के परिवार के साथ मनाते हैं तो दूसरे वर्ष सुरेश के परिवार के साथ वे मनायें। लिंडा तर्क करती कि किशमस सुरेश के

परिवार का त्यौहार ही नहीं है। हालांकि एक अर्से से डेनमार्क में रहते हुये शांडिल्य परिवार ने पूरी गर्मजोशी से क्रिशमस मनाना शुरू कर दिया था। क्रिशमस पेड़ घर में सजाना... गिफ्ट एसचेंज करना... यहॉ तक कि भारत स्थित उनके रिश्तेदार उन्हें क्रिशमस इव पर फोन करके उन्हें बधाई भी देते। मगर लिंडा का मानना था कि वे यह सब सिर्फ एक तफरी के लिये करते हैं।

हरेक क्रिशमस पर सुरेश व लिंडा की लड़ाई होती और अन्त में उनका क्रिशमस मनाना हर बार लिंडा के परिवार के साथ ही होता - उसके मातापिता व भाई के साथ।

सुरेश सम्भवत: यह सभी कुछ सहन कर लेता, अगर लिंडा की मोरगन से मरी हुई दोस्ती यकायक फिर जिंदा न हुई होती। यह सुरेश को भी मालूम था कि मोरगन लिंडा का स्कूल के दिनों का ब्वॉयफ्रेंड था। मगर तीन सालों बाद उनका ब्रेकअप हो गया था। लिंडा को सुरेश मिल गया और मोरगन ने एक यूनानी लड़की टेन्सी से शादी कर ली। दस वर्षो तक लिंडा का मोरगन से कोई सम्पर्क नहीं रहा, लेकिन जब जवान टेन्सी स्तन केंसर से मर गई तो लिंडा और उसकी दोस्ती फिर पनप गई। हालांकि लिंडा ने सुरेश को विश्वास दिलाने की भरसक कोशिश की कि मोरगन मात्र उसका एक मित्र है। पत्नी निधन से वह दुखी है, उसे अपनों से सहारे की जरूरत है। यहॉ पारिवारिक-सुरक्षा-जाल तो होते नहीं है, मित्रों का ही आसरा होता है। वह बस उसकी इस दुख से उबरने में मदद कर रही है। सुरेश, यद्यपि विश्वास करना चाहता था, नहीं कर पाया। सिगरेट व क्रिशमस से भी बढ़कर मोरगन उनके बीच दरार का कारण बन गया।

फिर उस शनिवार, सुरेश जब सुबह उठा तो बिस्तर में लिंडा को अपने बगल में नहीं देखा। उसे आश्चर्य हुआ कि छुट्टी का दिन होने के बावजूद लिंडा जल्दी कैसे उठ गई। उनके बारह वर्षो के लंबे सामिप्य में एक दिन भी लिंडा उससे पहले नहीं उठी थी। वह लिविंग-रूम में आया तो देखा लिंडा नहाये-धोये, अपने सुनहरे बाल बिखराये खड़ी है। गीले बालों से पानी टपक रहा था।

"चाय बनाऊं?" उसने जब मुस्कुराते हुये पूछा तो सुरेश को और आश्चर्य होने लगा। ऐसी सौजन्यता पति-पत्नी के बीच बिरले ही होती थी। *नेकी और पूछ-पूछ* / जोर से गर्दन हिला कर उसने हामी भरी। लिंडा किचन में चली गई, और वह सोफे पर इत्मीनान से पसर गया। आज वह अपने घर में स्वयं को असली आदमी महसूस कर रहा था। चाय बनाना, बच्चों के लिये दूध-नाश्ता बनाना सब लिंडा की जिम्मेदारी। वह सोफे पर पसर कर अखबार पढ़ेगा, टेलीविजन देखेगा। थोड़ी देर में जब अतुल व विपुल ऑखे मलते हुये बेडरूम से बाहर निकल कर आये तो वह चिल्ला कर लिंडा से बोला, "बच्चे जग गये। उनके लिये दूध भी बना दो।" उसने वीडियो पर बच्चों के लिये बिल्ली-चुहये वाली कार्टून फिल्म, टॉम एंड जेरी लगा दी। खुद भी वह उनके साथ बैठ कर फिल्म देखने लगा।

थोड़ी देर में लिंडा किचन से एक ट्रे के साथ प्रकट हुई। दूध के गिलास बच्चों को थमाये, चाय का मग पति को। स्वयं भी उसकी बगल में बैठ गई। उसके बालों को प्यार से सहलाने लगी। *'क्या बात है? आज यह इतनी प्यार से क्यों पेश आ रही है? क्या चाहिये इसे?'* सुरेश मन ही मन विचार कर रहा था कि लिंडा की तरफ से मांग आ गई, "*मीन एल्सकेडे*, एक फेवर करोगे?"

सुरेश ने प्रश्नात्मक निगाहों से उसे देखा। "बात ऐसी है... कि जब से विपुल पैदा हुआ मैं कहीं भी अकेले नहीं गई। मुझे अपने लिये भी कुछ समय चाहिये। आई नीड ए ब्रेक। अगर तुम घर में बच्चों को देख लो तो मैं कहीं घूमने चली जाऊं...?"

सुरेश को मालूम था कि कहीं जाने के लिये लिंडा को उसकी अनुमति की आवश्यकता नहीं है। उसकी स्वतंत्रा उसके अधीन नहीं थी।

"कहॉ जाना चाहती हो?" बड़ी विनम्रता से उसने पूछा।

"मोन्स क्लिफ जाने की सोच रही हूँ।"

"किसके साथ?" पूछते हुये वह स्वर संयत नहीं रख सका।

"फ्रेन्ड्स के साथ।"

लिंडा कई बार अपने मित्रों के साथ यूं ही अकस्मात कार्यक्रम बना लेती थी। कई वीक-एन्ड्स सुरेश को घर में अकेले बैठे बिताने पड़ते थे, जो उसे खिन्न करता था। वह सुझाते हुये बोला, "हम ऐसा करते हैं... बच्चों को मॉ-बाऊजी के पास छोड़ देते हैं। बस मैं और तुम... और मोन्स क्लिफ की नंगी चट्टाने... बड़ी रोमान्टिक जगह है।"

"सुरेश, क्यों तुम गोविन्द और कमला को परेशान करना चाहते हो? बच्चे उनसे बहुत हिले भी नहीं हैं। बच्चे तुम्हारे साथ घर में बहुत खुश रहेंगे। मैं जल्दी ही लौट आऊंगी। बस कुछ समय अकेले बिताना चाहती हूँ। प्लीज सुरेश... *मीन एल्सकेडे*।"

'कृपया मेरे माता-पिता का नाम मत लो। यह मेरी संस्कृति नहीं है,' वह चिलाना चाहता था। मगर खामोश बना रहा।

"*एल्सकेंडे*, मोन्स क्लिफ में ठंडी, ताजी हवा में कुछ देर सांस भरूंगी तो तरो-ताजा हो जाऊंगी। तब घर में तुम तीन मर्दो की सेवा और अच्छे ढंग से कर सकूंगी," कहते हुये वह सुरेश को प्यार से और सहलाने लगी, उसके गाल, गर्दन, वक्ष...।

"अच्छा, कार ले जाओ," चाय के घूंट भरते हुये उसने सुझाया।

"नहीं, कार तुम घर में रखो। तुम्हें बच्चों के साथ जरूरत पड़ेगी। थैंक्यू, सुरेश," कहते हुये लिंडा ने उसके गाल को चूमा, और तुरन्त बेडरूम में तैयार होने चली गई।

वह बच्चों के साथ बैठा कार्टून फिल्म, टॉम और जेरी का डेनिश वर्जन देखता रहा, लेकिन ध्यान शयनकक्ष में तैयार होती लिंडा की तरफ था। *'क्यों नहीं उसने उस मित्र का नाम बताया जिसके साथ वह मोन्स क्लिफ जा रही है?'*

खूब बनठन कर, लिपिस्टक लगा, परफ्यूम महका, हल्की सी ज्वैलरी पहन लिंडा बेडरूम से बाहर निकली। सुरेश ने उस पर एक नजर डाली। तैयार होकर उसकी सुन्दरता और निखर गई थी। पति व बच्चों को किश करते हुये, उन्हें 'बॉय' कहते हुये वह मुख्य द्वार से बाहर निकल गई। सुरेश सशंकित मन से सोफे पर बैठा रहा। पत्नी को उसने जाने तो दिया लेकिन...। शक ने उसके मन व मस्तिष्क को जकड़ लिया।

कार्टून फिल्म में सिलेटी बिल्ली भूरे चुहिये के पीछे पड़ी थी, और देखते ही देखते सिलेटी बिल्ली ने भूरे चुहिये को अपने पंजों में जकड़ लिया। "उफ्फ..." कहते हुये वह उठ गया। कमरे में चहलकदमी करने लगा। पॉच-सात मिनट के सोच-विचार के बाद वह गुसलखाने में गया। नहाधोकर तैयार हो गया। अतुल व विपुल को भी उसने तैयार कर लिया। उनके लिये खाने का कुछ सामान,. बिस्किट, केक वगैरह व पानी कार में रखा। दो वर्षीय विपुल अभी तक दूध की बोतल व डायपर पर था। उसने उसके लिये दूध की बोतल भर कर रखी व दो डायपर रखे। दोनों बच्चों को पीछे की सीट पर बैठा कर बैल्ट बॉधी। "डैडी, हम कहॉ जा रहे?" अतुल ने पूछा।

"मोन्स क्लिफ।"

"जहॉ मम्मी गई हैं?"

"हॉ।"

"हम मम्मी के साथ क्यों नहीं गये?"

सुरेश को कोई जवाब नहीं सुझा, बोला, "हम मम्मी को सरपराइज देना चाहते हैं।"

"मम्मी..." विपुल अपनी मॉ की याद में सहसा रोने लगा।

"रो मत, विपुल, हम मम्मी के पास ही जा रहे हैं," अतुल उसे चुप कराने की कोशिश करते हुये बोला।

ड्राइवर की सीट पर बैठे कर सुरेश ने इंजन स्टार्ट किया, और मोन्स क्लिफ की ओर बढ़ गया। एक लंबी ड्राइव थी...।

मोन्स क्लिफ की सफेद, चमकदार चट्टाने समुद्र से उठती हुई सी प्रतीत होती हैं। डेनमार्क का एक सुन्दर भू-दृश्य है। स्थल का मुख्य भाग समतल चट्टाने हैं जिसमें पार्किंग प्लेस, रेस्टोरेन्ट, पर्यटक आकर्षण की दुकानें व सुन्दर बाग बने हुये । चट्टानों के नीचे नीला लहराता विशाल समुद्र...।

कार पार्क करके सुरेश कुछ देर तक कार में यूं ही बैठे रहा। वह जो करने जा रहा है, करे कि नहीं? मनन करता रहा।

"डैडी हम उतर क्यों नहीं रहे है?" अतुल पीछे से कसमसाते हुये बोला।

लंबी सांस भरते हुये अन्ततः वह उतर गया। पीछे का दरवाजा खोल कर विपुल को उसने गोद में लिया। अतुल उसके साथ-साथ चलने लगा। रेस्टोरेन्ट, दुकाने, बाग सभी जगह उन्होंने लिंडा को तलाशा। पहाड़ियों पर भी कुछ दूर ऊपर चढ़ कर देखा। वह कहीं नजर नहीं आयी। फिर वे तीनों सीढ़ियां उतर कर समुद्रतट की ओर जाने लगे। शाक, झाड़ियां और पेड़ों से घिरे चार सौ सीढ़ियों के सर्पाकार क्रम इस स्थान का सबसे खूबसूरत नजारा है। मगर आज सुरेश यहॉ प्राकृतिक परिदृश्यों के सौन्दर्य को आत्मसात करने नहीं आया था। वह शक से घिरा था। यह देखने आया था कि उसकी पत्नी अपने किस मित्र के साथ अपने पति व बच्चों को छोड़ कर यहॉ आयी है।

सूरज पहाड़ियों के ऊपर गोल चमक रहा था। उस लंबे समुद्रतट से जहॉ तक नजर जाये, सिर्फ पानी ही पानी। सुदूर, आकाश व पानी एक-दूसरे में विलय होते प्रतीत हो रहे थे। तट पर कई छोटे-बड़े पठार खड़े हुये। उन्हीं में से एक बड़े व चपटे पठार पर लिंडा मोरगन के साथ बड़े इत्मीनान से बैठी थी। हमेशा की तरह उसके हाथों में सिगरेट सुलग रही थी। उसे मोरगन के साथ प्रत्यक्ष रूप में देख कर सुरेश के मन में क्रोध की ज्वाला और धधक गई । हालांकि मोरगन कोई बहुत लंबा-चौड़ा नहीं था, मगर उसे वह उस वक्त एक सफेद विशालकाय दैत्य की तरह नजर आ रहा था। यहां तक कि दूसरी चट्टान पर बैठे लिंडा के दो अन्य मित्र एनिली व ओस्कर पर उसकी नजर तक नहीं पड़ी, या उसने उन्हें देखना नहीं चाहा।

लिंडा की भी नजर सुरेश व बच्चों पर पड़ी। एक पल के लिये तो उसे विश्वास ही नहीं हुआ कि उसके पति व बच्चे उसके सम्मुख खड़े हैं। चौंक कर वह खड़ी हो गई। हाथों से सिगरेट छूट कर पानी में गिर गई। मोरगन भी सहम कर खड़ा हो गया।

बहरहाल बच्चे अपनी मां को देख कर बेहद खुश थे। अतुल मॉ के पास पहुॅचने के लिये उस ऊंचे पठार पर चढ़ने की नाकामयाब कोशिश करने लगा। सुरेश की गोद से विपुल भी "मम्मी" कहते हुये लिंडा की ओर लपकने लगा।

विपुल को गोदी में जकड़े सुरेश ने गुस्से से लिंडा से प्रश्न किया, "यह व्हाइट मॉन्की तुम्हारी बगल में क्या कर रहा है?"

उसके पास कोई जवाब नहीं था, सिर्फ बौखलाई हुई एक नजर थी।

"यह मेरी बीवी है, बगल से हट स्याले..." सुरेश मोरगन पर चीखा। "अगर अपनी बीवी मर गई तो इसका मतलब यह नहीं कि दूसरों की बीवियों के साथ मौज-मस्ती करने लग जाओ। बहुत दिनों से तुझे सहन कर रहा हूॅ...।"

बड़ा ही हास्यप्रद व शर्मनाक नजारा था...। लिंडा, चकित सी मोरगन के साथ चट्टान पर खड़ी हुई। एनिली व ऑस्कर दूसरी चट्टान पर खड़े हुये। अतुल चट्टान पर चढ़ने की जबरदस्त कोशिश में। सुरेश की गोदी से विपुल अपनी मॉ की गोदी में जाने के लिये बेताब। सुरेश की मोरगन पर गालियों की बौछार, जिन्हें मोरगन मुॅह लटकाये खामोश सुन रहा।

नजारा और अधिक शर्मनाक हो कि लिंडा सचेतन हुई। चट्टान से कूद कर नीचे जमीन पर आयी। अतुल का हाथ थामा। उसे पकड़ कर धीरे-धीरे सुरेश के पास आयी। विपुल को उसकी गोदी से लेते हुये धीमे मगर सख्त शब्दों में बोली, "घर चलो। हम घर में बात करेंगे।"

सुरेश मोरगन पर और गालियां बरसाना चाहता था कि लिंडा उसे खींचते हुये वहॉ से ले जाने लगी। वह गर्दन मोड़-मोड़ कर मोरगन पर गालियां बरसाने लगा, "यह मेरी बीवी है। खबरदार जो कभी मेरी बीवी पर हाथ भी लगाया...। रिसपेक्ट माई मैरिज। अपनी बीवी मर गई तो इसका मतलब यह नहीं कि दूसरी की बीवियों के साथ...।"

मोरगन चट्टान पर अकेला खड़ा पीछे से उन चारों को खामोश, विस्फारित ऑखों से जाते हुये देखता रहा। दूसरी चट्टान पर एनिली व ऑस्कर भी भौच्चके खड़े हुये। सभी के पांव अपनी जगह जमे हुये।

ऊपर, पार्किंग प्लेस पर पहुॅच कर लिंडा पीछे सीट पर बच्चों के साथ बैठ गई। सुरेश आगे अकेला बैठ कर चुपचाप इंजन स्टार्ट कर कार चलाने लगा। पूरे सफर उनके बीच ऐसा माहोल बना रहा जैसे वह गाड़ी चलाने वाला एक ड्राइवर, और पीछे बैठे अन्जान यात्री । कोई बात, कोई भी लब्ज का आदान-प्रदान उनके बीच नहीं हुई। लिंडा बच्चों से उलझी रही। और सुरेश ने एक बार भी पीछे मुड़कर नहीं देखा।

घर पहुॅच कर लिंडा थकी-हारी, रोई-पिटी सोफे पर उसी जगह बैठ गई, जहॉ सुबह बैठ कर उसने बड़े प्यार से अपने पति से मोन्स क्लिफ जाने की इजाजत मॉगी थी। उमड़ते उद्वेग को दबाने के लिये उसने अपना चेहरा हथेलियों से ढक लिया। "सुरेश, दिस मैरिज इज ऑवर।"

"किसी पति से यह अपेक्षा करना कि वह अपनी बीवी को उसके पूर्व प्रेमी की बॉहों में सोने दे, बहुत ज्यादती है।"

"बकवास बन्द करो," वह उठकर सुरेश के मुख पर उंगली रखते हुये बोली। "मैं उसकी बांहों में नहीं सो रही। कुछ भी हमारे बीच ऐसा नहीं है। मेरा उसके साथ कोई अफेयर नहीं चल रहा।"

"तो फिर क्यों उससे मिलती रहती हो? क्या मैं तुम्हारे लिये काफी नहीं हूॅ?"

"खामोश, यू स्टुपिड मेन!" वह चीखी और सुरेश पर मुक्के जमाने लगी। सुरेश ने तुरन्त अपनी बलिष्ठ बॉहें आगे करली। एक घायल सिंह की तरह वह चिल्लाने लगा, "अगर वह सिर्फ तुम्हारा एक दोस्त है तो कहॉ गई थी तुम्हारी दोस्ती ग्याारह सालों तक। क्यों तुमने उसकी बीवी के मरने का इन्तजार किया। क्योंकि अब वह तुम्हारे लिये उपलब्ध हैं। लेकिन मैं," वह दहाड़ा, "तुम्हार पति, सुरेश शान्डिल्य अभी जिन्दा है। मुझे मोरगन की बीवी के तरह मरा हुआ मत समझो।"

"क्या बकने में लगे हो?" लिंडा थोड़ा अचरज से बोली।

"यह बकवास नहीं, हकीकत है। तुम दोनों मुझे भी मरा हुआ समझ रहे हो।"

"शटअप !" लिंडा चिल्लाई और दूसरे ही पल अपने हाथों से पंजा बनाते हुये उसकी गर्दन पर झपटी, और उसे दरवाजे की ओर ढकेलते हुये बोली, "गेट द हेल आउट ऑफ हियर। आई हेव हेड इनफ ऑफ यू, सुरेश शांडिल्य।"

लिंडा भारी बदन की महिला नहीं थी। सुरेश ने उसे जोर से एक धक्का दिया कि वह एक हल्की वस्तु की तरह जमीन पर ओंधी गिर पड़ी। उसके सुनहरे बाल बिखर गये। और अब उनकी लड़ाई ने अपना नियन्त्रण खो दिया।

"यू डर्टी इंडियन मेन..." जमीन से उठते हुये, अपने बालों को चेहरे से हटाते हुये लिंडा चीखी, "डिसगस्टिंग! डिसगस्टिंग!"

"यू फिल्डी डेनिश वूमेन... सुरेश भी चीखा, "डेम्न इट! डेम्न इट! "

लिंडा उस पर मुक्के बरसाने लगी। वह उसके बाल खिंचने लगा। लिंडा करहाई, वह चीखा। कुशन्स, शो पीसेज, किताबें जो चीजें उनके हाथों में आयी, हथियार बना कर एक-दूसरे पर पटकने लगे।

बच्चे अपने माता-पिता को दो कट्टर दुश्मनों की तरह लड़ते देख रो पड़े। एक दूसरे पर जो वे गन्दी गालियां उछाल रहे थे उसे सुनकर वे हक्के-बक्के। मगर माता-पिता को इस वक्त उनकी कोई परवाह नहीं थी। वे एक-दूसरे की कमियों पर हमला कर रहे थे और खूबियों पर कटाक्ष। दोनों के चेहरे एक-दूसरे के प्रति घृणा के भाव से विकृत हो गये थे। कई मुद्दों को कुरेदा जा रहा था। एक-दूसरे के दबे जख्मों को फिर से हरा किया जा रहा था। एक-दूसरे को याद दिलाया जा रहा था कि किस समय, किसने, किस तरीके से अपने हमसफर के साथ विश्वासघात किया था, उसकी निष्ठा पर चोट पहुॅचायी। एक-डेढ़ घंटे तक बच्चे बिल्कुल नजरान्दाज रहें। अपने माता-पिता के चकनाचूर हो रहे रिश्तों के चश्मदीह गवाह बने रहें। डर से भरे हुये थे। विपुल अधिक भयातुर। मुॅह में अंगूठा डाले

वह अपने भाई अतुल से चिपका हुआ बैठा था। उम्र उनकी कम थी मगर उन्हें इसका आभास अच्छी तरह था कि मातापिता की आपसी लड़ाई का सबसे घातक प्रभाव बच्चों पर पड़ता है।

वे लड़ते गये...भिड़ते गये। जब वे लड़-झगड़ कर, एक-दूसरे को गाली बक-बक कर थक कर चूर हो गये, तो एकदम खामोश हो सोफे पर थके-हारे दो बुड्डों की तरह बैठ गये - नजरें छत पर तान कर।

उनकी खामोशी भी बच्चों को एक पागलपन लगने लगी। अतुल डरते हुये बोला, "मम्मी-डैडी आप दोनों ठीक तो हो न?"

मॉ अपने कोध को अपने बच्चों पर निकालना अपना प्राकृतिक अधिकार समझती है। "यह क्या पिग्स की तरह अभी तक यहॉ बैठे हो?" लिंडा उनपर बरसी, फिर चुटकी बजाते हुये बोली, "बॉयज, गो टू बैड।"

दोनों एकदम से उठे और चुपचाप अपने कमरे की ओर भागे।

"रूको," सुरेश पीछे से चिल्लाया। "तुमने तो कुछ खाया ही नहीं।"

दोनों ठहर गये। उनका पेट खाली था, गुड़गुड़ कर रहा था। भूख से अधिक भय के मारे।

उनके चेहरे पर छाये डर के भाव पढ़ते हुये सुरेश को सहसा उनपर दया आ गई। अपने पुत्रों पर उसे नाज था। दोनों शक्ल-सूरत में अपनी माता की बजाये अधिक उससे मिलते थे, जो विशेषकर ऐसे क्षणों में उसके मन को एक धीरज देते थे।

"चलो, मैं तुम्हारे लिये कुछ पकाता हूँ," वह प्यार से उनसे बोला।

दोनों बच्चें मॉ पर सहमती दृष्टि डालते हुये पिता की ओर लपके। सुरेश उन्हें लेकर किचन में आ गया। सुबह से शान्त पड़े किचन को सक्रिय किया। कुकिंग रेंज के एक बर्नर पर पास्ता उबालने रख दिया, और फ्रिज से गाजर, टमाटर व पिपरामूल निकाल कर काटने लगा। अतुल डाइंनिग टेबल पर प्लेटे व गिलास लगाने लगा। पास्ता जब उबल गया तो बटर व लाल, हरे सोसेज से फेट कर उसे रंगीन बना दिया। अच्छी महक किचन में बिखर गई।

पास्ता, सलाद, दही व आईस क्रीम डाइंनिंग टेबल पर रात्रि भोज के रूप में सज गई। सुरेश ने बच्चों को प्लेट में भोजन परसा। लिंडा ने अपने लिये वाइन का गिलास भर लिया था। सिगरेट भी सुलगा दी थी। सोफे पर अकेली बैठी वह सिगरेट के कश ले रही थी, वाइन के घूंट के साथ। एक टेड़ी व तीखी नजर से बाप-बेटों को एक साथ काम करते हुये भी देख रही थी।

अतुल पास्ते पर टूट गया। विपुल को सुरेश अपने हाथों से खिलाने लगा।

"डैडी, पास्ता बहुत स्वादिस्त है," चटखारे लेते हुये अतुल बोला।

विपुल ने भी चटखारा मारा।

सुरेश जिस कांटे से विपुल को खिला रहा था, उसी से उसने स्वयं भी चखा।"हूँ... माय गुड सन्स! पास्ता वाकई बहुत अच्छा बना है।"

"यूवर डैड इज ए गुड कुक। मेरी मॉम ने हम सभी भाई-बहनों को खाना पकाना सिखाया जब हम छोटे थे।"

"डैडी, डैडी, आप भी खाओ," अतुल बोला और डाइंनिग टेबल पर एक और प्लेट के लिये जगह बनाने लगा

लिंडा और जलभुन गई। बाप-बेटों के इस आपसी सौहार्द में वह स्वयं को बिल्कुल उपेक्षित महसूस कर रही थी। एकाएक झटके से वह उठी और दनदन करते हुये सुरेश के करीब आयी। विपुल को उसकी गोदी से छीनते हुये बोली, "तुम इसे खाना नहीं खिलाओगे। तुम्हारा बच्चों पर कोई अधिकार नहीं है।"

बड़ा तीखा प्रहार था। सुरेश के हाथ का कांटा छिटक कर दूर फर्श पर खट् से जा गिरा। उससे लगा पास्ता तितर-बितर जमीन पर बिखर गया। विपुल रोने लगा। अतुल की ऑखों में भी आंसू तैरने लगे। एक पल पहले वह जो पास्ते पर टूटा हुआ था अब मायूसी में उसने प्लेट परे सरका दी।

सुरेश गुस्से के घूंट भरते हुये हताश स्वर में बोला, "मेरा तुम पर कोई अधिकार नहीं, बच्चों पर नहीं... यह कैसी जिन्दगी तुम मुझे अपने साथ गुजारने के लिये विवश कर रही हो? ब्लडी, इडियट डॉग।"

"जब कोई पति अपनी पत्नी पर अधिकार खोता है तो उससे जन्मे बच्चों से उसका अधिकार स्वत: ही हट जाता है," उसने दलील दी।

सुरेश दांत किटकिटाते हुये बोला, "मेरे सब्र की सीमा तोड़ रही है, बेशरम औरत! अरे खुद पर शरम कर! घर में पति व बच्चों को छोड़ कर अपने यार के साथ रंगरलियां मनाने चली गई— रंगे हाथ मैंने और बच्चों ने तुझे पकड़ा है उसके साथ। और अब घर में आकर तमक रही है। यू कान्ट बी सेटिसफाइड विध वन मेन।"

लिंडा ने तुरन्त अपने लड़कों की ओर देखा। दोनों आंसू भरी ऑखों से उसे एकटक देख रहे थे जैसे पूछना चाह रहे हो— सच मम्मी?

इतनी अधिक शर्मिन्दगी! प्रतिकार भी नहीं किया गया। लिंडा की गहरी हरी ऑखे धीरे-धीरे ऑसुओं से भर गई । ऑसुओं से झिलमिलाती ऑखे सुरेश पर तानने हुये बोली, "तुमने अब समझौते की सारी उम्मीदें खतम करदी है।"

सुरेश चुपचाप तेज कदमों से वहॉ से चल कर बेडरूम में सोने चला गया, दरवाजा भड़ाक् से बंद कर दिया। लिंडा ने पल भर के लिये ऑखे बंद करके सांस भरी। फिर अपने ऑसू पोंछे, और रोते-बिलखते बच्चों को चुप कराते हुये उन्हें पास्ता खिलाने लगी। उसकी मनस्थिति बहुत बिगड़ी हुई थी मगर उसके अन्दर छुपी मॉ कह रही थी कि उसके बच्चे भूखे हैं। उन्हें खुराक चाहिये।

बच्चों को खाना खिला कर वह स्वयं खाली पेट उनके साथ गुड़मुड़ होकर बिस्तर में ढुलक गई।

सुबह जब वे उठे तो काफी कुछ शान्त था। रात्रि की लंबी पहर उनके मन व मस्तिष्क में विश्रान्ति ले आयी थी। विद्रोह उनका शरीर छोड़ चुका था। सुरेश चुपचाप सोफे पर बैठ कर नित्य की भॉति अखबार पढ़ने लगा। एक अच्छी गृहणी की तरह लिंडा ने कॉफी बनाई और दो मगों में भर कर ले आयी। सुरेश की ओर एक मग बढ़ाया तो सुरेश ने पल भर के लिये उसे निहारा। थैंक्यू बुदबुदाते हुये जब उसने मग उसके हाथों से लिया तो उसका हल्का सा स्पर्श उसे नया सा लगा, जैसे पता नहीं कितने महीनों बाद वह अपनी पत्नी को छू रहा हो।

लिंडा उसके सामने बैठ कर कॉफी के घूंट भरने लगी। दोनों के बीच अजीब सी खामोशी छाई रही। दोनों फैसला कर चुके थे। वे अपनी जिन्दगी यूं नहीं गुजार सकते।

कुछ क्षणों बाद लिंडा बड़े शांत भाव से बोली, "सुरेश, हमारे बीच बहुत कुछ घट चुका है। ऐसे में साथ रहने से कोई फायदा नहीं। शक, विश्वासघात, गाली-गलोज, मार-पिटाई क्या नहीं हो गया हमारे बीच..." कहते-कहते उसकी आवाज भर्रा आयी।

सुरेश भी शान्त भाव से बोला, "लिंडा, मैं तुमसे बस वफादारी चाहता हूॅ।"

"क्या बेवफाई की है मैंने तुम्हारे साथ?"

"मैं तुमसे यही तो चाहता हूॅ कि मोरगन से अपनी दोस्ती तोड़ दो।"

"यह दोस्ती का प्रश्न नहीं है बल्कि विश्वास की बात है। तुमने मुझ पर शक किया। मेरा पीछा किया। मुझे मेरे दोस्तों व बच्चों की नजरों में गिराने की पूरी कोशिश की। उस वक्त तुम यह भी भूल गये कि मैं सिर्फ तुम्हारी पत्नी ही नहीं, तुम्हारे बच्चों की मां भी हूॅ..." कहते हुये लिंडा रो पड़ी।

सुरेश ने आगे बढ़कर उसे सहलाना चाहा मगर वह ऐसा नहीं कर सका। उनके बीच खिंची लाइन बहुत गाढ़ी हो चुकी थी। वह बुत बना लिंडा को रोता देखता रहा।

लिंडा अपने ऑसू पोंछते हुये रूंधे स्वर में अटक-अटक कर बोली, "हमारे बीच... रिश्तों की सभी सुन्दरता... खतम हो गई है। कहीं कुछ गहरा हिल गया है हमारे बीच। हमारा साथ बने रहने से कोई औचित्य नहीं। या तो तुम इस घर से जाओ या फिर मैं जाती हूॅ...।"

"फिर क्या होगा?" सुरेश ने हल्के स्वर में पूछा।

"तलाक ! " लिंडा बोली और उसे उदास निगाहों से देखने लगी। यह भी कोई पूछने की बात है? यह तो सर्व विदित है कि पति-पत्नी का रगड़ते-झगड़ते-झड़पते जब साथ रहना असंभव हो जाता है और संबध विच्छेद की जो प्रकिया उनके बीच घटित होती है उसे दुनिया वालों ने तलाक नाम दिया है।

वह बोला, "हर शादी में कुछ न कुछ विवाद होते हैं, हर पति-पत्नी के बीच कुछ न कुछ वैवाहिक मतभेद होतें हैं। तलाक पहला विकल्प नहीं होना चाहिये।" एक पल बाद वह तल्खी से बोला, "तुम मुझे छोड़ सकती हो। मगर उस व्हाइट मॉन्की से अपनी बेवजह की दोस्ती को नहीं...।"

"सुरेश, मैं तुम्हें बार-बार कह रही हूँ कि यह मोरगन से दोस्ती करने या छोड़ने का प्रश्न नहीं है। यह पति-पत्नी के बीच एक विश्वास की बात है, जो उनके रिश्ते का आधार है। मुझे बेहद अफसोस है कि तुम्हारा मुझसे विश्वास हट चुका है...। "

उसने उससे अपने घर वालों की मर्जी के खिलाफ विवाह किया था। उनका सन्देह था कि एक गोरी औरत से उसकी उम्र भर निभ जाये यह नामुमकिन है। लिंडा के साथ चिरस्थाई रिश्ता कायम कर उसने अपने घर वालों को गलत साबित करने की ठानी थी। अपने समाज को वह दिखाना चाहता था कि एक सांवला ऐशियन आदमी एक गोरी यूरोपीय औरत के साथ प्रेमपूर्वक अपना पूरा वैवाहिक जीवन काट सकता है। अनायास ही उसे लिंडा के साथ बिताई पहली रात की याद आ गई... जब वे एक-दूसरे से मुलाकात के चंद घंटों बाद ही उस डांस क्लब से उसके तंग फ्लैट में चले गये थे...। कितना मधुर था वह प्रथम मिलन! उसके बाद भी कितनी ही सुहावनी रातें, कितने मीठे क्षण लिंडा के साथ बीते थे! मगर कब, कैसे, क्यों, क्या उनके बीच कुछ ऐसा बिगड़ा कि तलाक की नौबत आ गई ...। वह भावुक होते हुये बोला, "लिंडा मैं तुम पर शक नहीं, तुमसे प्यार करता हूँ। तुम्हारे साथ अपनी बाकी की जिन्दगी भी गुजारना चाहता हूँ।" वह उसे याद दिलाते हुये बोला, "लिंडा, जब हमने शादी की थी तो तुमने कहा था कि हम एक ऐसी यात्रा पर साथ निकल रहें हैं जो एक की मौत पर ही खतम होगी।"

ऑखों में ऑसुओं को लिये लिंडा एक वीभत्स हंसी हंसी। तल्खी से बोली, "पूरी जिन्दगी एक के साथ बीत जाये, सुरेश शांडिल्य, यह हर कपल के लिये संभव नहीं होता। पर देखो हम बारह साल तो साथ रहे हैं न...।"

"बारह साल ! लिंडा, भले ही तुम मुझे पुराने ख्यालों का समझो पर मैं शादी की पवित्रता पर विश्वास करता हूँ। मैं समझता हूँ कि पति-पत्नी को सारी जिन्दगी एक-दूसरे के साथ...। मैरिज इज मेन्ट टू लास्ट...।"

"पत्नी की पवित्रता पर विश्वास करे बगैर तुम शादी की पवित्रता में कैसे विश्वास कर सकते हो?" लिंडा अपने कटाक्ष के साथ उसे बीच में टोका।

वह खामोश नहीं हुआ। "देखो, लिंडा, तुम्हारे और मेरे परिवार में कोई भी तलाकशुदा नहीं है। परसो मेरे मातापिता अपनी शादी की पचासवीं सालगिरह मना रहे हैं - पचासवीं। तुम्हारे मातापिता डेनिश हैं फिर भी पिछले बयालीस सालों से एक साथ रह रहे हैं। मेरा भाई, मेरी बहन सभी अपनी शादी में टिके हुये हैं। उनके बीच भी जरूर कोई न कोई मनमुटाव, मतभेद होगें, मगर वे तलाक की नहीं सोचते। यहॉ तक कि तुम्हारा भाई भी पिछले आठ सालों से अपनी कनाडियन बीवी के साथ रह रहा है। पिछले क्रिशमस में तुम्हारे भाई ने मुझसे कहा था कि वह व उसकी पत्नी एक-दूसरे के प्रति कमिटड है। वे कभी एक-दूसरे को नहीं छोड़ेगें। देखो, लिंडा, इतने सारे उदाहरण हैं हमारे सामने अनुसरण करने के लिये...।"

उसके चिरस्थाई विवाह सम्बन्धों के लंबे भाषण का लिंडा पर कोई असर नहीं हुआ। बल्कि वह और चिढ़ते हुये बोली, "यह मेरी जिन्दगी है। मुझे केवल इसलिये अपने पति के साथ नहीं रहना कि अन्य औरते अपने पतियों को नहीं छोड़ रही।"

"क्या मैं इतना खराब पति हूँ?" सुरेश ने रूंवासे स्वर में हठात् प्रश्न किया तो लिंडा की नजरे उस पर तन गई । उसे निहारते हुये, कुछ सोचते हुये बोली, "नहीं। सुरेश, तुम एक अदभुद इन्सान हो। मैंने भी तुमसे प्रेम किया था। तुम्हें छोड़ने में मुझे अति कष्ट हो रहा है। मगर साथ रहने में और भी होगा। हमारे बीच बहुत कुछ ऐसा घट चुका है कि अगर हम साथ रहें तो एक-दूसरे को केवल नुकसान पहुचायेगें। हमारे अलग हो जाने पर ही हमारी बेहतरी है।"

"यह मेरी गलती नहीं है कि हमारे बीच तलाक की नौबत आ गयी हैं, फिर भी मैं कहता हूं - आई एम सॉरी।"

"सुरेश माफी मांगने से कुछ नहीं होगा। सब कुछ हमारे बीच खतम हो गया।"

"हम निर्णय लेने के लिये स्वतंत्र नहीं है। हमारे दो बच्चे हैं।"

"दुनिया में कितने ही ऐसे बच्चे हैं जिनकी माता-पिता की आपस में नहीं पट सकी।"

"मैं नहीं चाहता कि मेरे बच्चों की गिनती उन बच्चों में हो।" क्षण भर बाद हल्के से मुस्कुराते हुये वह बोला, "सुबह तुम मुझे '*मीन एल्सकेडे* - माय डार्लिंग' पुकारती हो और शाम को अपनी जिन्दगी से दूर चले जाने को कहती हो...जिन्दगी इतनी सादी नहीं है, लिंडा मोलर।"

"इसे और कॉम्पलेक्स मत बनाओ, सुरेश शाडिंल्य। गो वैक - प्लीज गो फरोम हियर।"

सुरेश दुखी चेहरा बनाये, जड़ सा अपनी जगह खामोश बैठा रहा। वह क्या करे, उसकी समझ से परे था।

काफी क्षण यूं ही फिसल गये। लिंडा बोली, "अगर तुमने कभी मुझसे जरा भी प्यार किया है तो मेरे फैसले का आदर करोगे।" उसके शरीर की जड़ता खतम हुई। वह थोड़ा हिला।

विच्छेद बहुत मुश्किल था मगर अब यह अनिवार्य लगने लगा। इसी में शान्ति थी। हतोत्साहित सा वह उठा और अपना सामान समेटने लगा। बेडरूम में खड़े होकर काफी देर तक वह यूं ही बिस्तर को घूरता रहा जहॉ वह बारह वर्षो तक लिंडा की बगल में सोया था। अलमारी में से लिंडा के कपड़ों के साथ टंगे अपने कपड़े छांट-छांट कर बहर निकालने लगा। केबिनेट, जो उसने लिंडा के साथ मिल कर खरीदी थी, उसकी दराजों से अपने सभी कार्ड व कागजात निकाले। लिंडा इधर–उधर से उसका सामान बटोर कर उसके सामने चट्टा लगाने लगी। वह धीरे-धीरे पैक करने लगा।

एक अजीब सी खामोशी उनके बीच छा गई। "शुरूवात में छ: महीनों तक अलग रहना पड़ेगा, फिर तलाक में शायद दो–चार महीने और लग जाये। डेनमार्क में तलाक लेना बहुत मंहगा नहीं है। मेरे वकील ने कहा है कि अगर हम बच्चे, घर सभी मामलों में आपस में समझौता करले तो एक घंटे में भी तलाक हो सकता है," लिंडा बोली तो सुरेश उसे कठोर दृष्टि से घूरने लगा।

वह सकपकाते हुये बोली, "तुम अपने वकील से बात कर सकते हो।"

सहसा सुरेश को आभास हुआ कि लिंडा तलाक का फैसला बहुत पहले ले चुकी थी। मोन्स क्लिफ की घटना ने सिर्फ उसके निर्णय को सहज किया। उसे यकायक लिंडा से अति नफरत होने लगी। वह उसकी जिन्दगी से स्वयं ही बहुत दूर चले जाना चाहने लगा। उसे पूर्णतय: उपेक्षित कर उसने फटाफट अपने कपड़े दो सूटकेसों में ठूसे। कार्ड व कागजात एक बैग में भरे और घर से बाहर निकल गया। बच्चे बेडरूम में अभी तक सो रहे थे। उन्हें बॉय करने का भी दिल नहीं किया।

"सुरेश, एक मिनट..." लिंडा पीछे से चिल्लाई।

वह दरवाजे तक आ गया था। पीछे मुड़कर उसने उसे हिकारत से देखा।

वह दोनों हाथ फैलाते हुये बोली, "यह सब सामान हमने मिलकर खरीदा था। हम आपस में बराबर बॉटेगें।"

वह रूखे स्वर में बोला, "मुझे कुछ नहीं चाहिये। तुम सब रख लो। तुमने ठीक कहा था कि जब कोई आदमी अपनी पत्नी से अधिकार खोता है तो उससे जुड़ी सभी चीजों से उसका अधिकार स्वत: हट जाता है।"

"कुछ तो ले जाओ। कम से कम वे चीजे जो तुम्हें विशेषकर पसन्द हैं। अपनी बिल्ली...।"

बिना कुछ कहे वह वह लंबे पग भरते हुये घर से निकल गया, पीछे अपना मकान, सामान, बच्चे, बिल्ली, अपनी समस्त भौतिक सम्पत्ति छोड़कर।

कार्ल लेंगसवाय, वेलबी - इमीग्रेन्ट्स आधिपत्य इलाके पर गोविन्द प्रकाश व कमला का निजी बंगला था। वे वहॉ पिछले तीस वर्षो से रहे थे। उनके तीनो बच्चे उसी बंगले में बड़े हुये थे। बच्चे बड़े हुये, उन्होंने नौकरी ली, उनकी शादी हुई और वे अपने मातापिता का घर छोड़ कर अपना अलग घरोंदा बसाने चले गये। लेकिन उनके निजी कक्ष उनके मातापिता के घर में अब भी सुरक्षित थे— बिल्कुल वैसी अवस्था में जैसे वे छोड़कर गये थे। गोविन्द प्रकाश

व कमला कभी-कभार डस्टिंग व वेक्यूम क्लिनिंग के लिये ही उन कमरों में घुसा करते थे। कमरे शान्त थे, वीरान थे, सभी वस्तुऐं अपनी जगहों पर ऐसी पड़ी थी जैसे कब से इन्हें छुआ न गया हो।

बच्चे समय-समय पर अपने-अपने ठिकानों से मातापिता के घर आते। कहकहों व हंसी मजाक की गूंज से घर को कुछ पलों के लिये स्पन्दित कर देते। फिर वही गहरी शान्ति, एक चुप्पी। गोविन्द प्रकाश व कमला घर में अकेले बैठे अपने बच्चों की आगामी मुलाकात का इन्तजार करने लगते।

गोविन्द प्रकाश ने डेनमार्क में कई प्रकार का व्यवसाय पकड़ा था, पर्याप्त धन अर्जित किया था। जवानी में कमला ने भी छोटी-मोटी नौकरियां व व्यवसाय पकड़ परिवार की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में अपना पूरा सहयोग दिया। अब वे बूढ़े थे, रिटायर थे। गोविन्द प्रकाश एक चतुर पुरूष थे और कमला एक कर्मकुशल गृहणी। दोनों ने अपनी जवानी में ऐसी बुनियाद रख दी थी, जो बुढ़ापे में उन्हें कुछ अच्छे दिन दिला सके। उनके पास पैसा था खर्च करने के लिये और फुरसत थी मनोरंजन के लिये।

समय गुजारने के लिये उनके लिये शहर में एक भारतीय मंदिर था, जिसके निर्माण में उन्होंने अहम् भूमिका निभाई थी। गोविन्द प्रकाश व कमला मंदिर की गतिविधियों में बड़े सकिय बने रहते। मंदिर और भगवान... उनकी जिन्दगी के अब महत्वपूर्ण पहलू थे।

गर्मियों का सुहावना मौसम था। इस वर्ष डेनमार्क में गर्मियों के दिन थोड़े लंबे खिंच गये थे। नरम-नरम गर्मी पड़ रही थी। कमरे का कपाट खुला था। कमला ड्राइंगरूम में बैठे चाय की चुस्कियां ले रही थी, साथ ही घर के आगे फैले बगीचे को मंत्रमुग्ध निहार रही थी; जो उन्होंने रोज व लिलि के फूल लगाये थे, उनमें सुन्दर बहार खिली थी। गुढ़हल का झंखार लाल फूलों से लद गया था। सेब व नाशपती के पेड़ पूरे हरे हो रखे थे। उनकी हरी-भरी शाखायें ऐसी लग रही थी जैसे तुमसे बात करने को आगे बढ़ रही हो।

कमला बगीचे को निहारते हुये उसकी सुन्दरता व उसे ढंग से रखने के लिये अपने प्रयास को मन ही मन दाद दे रही थी। सोच रही थी कि दो दिन बाद जो वह व उसके पति अपनी शादी की पचासवीं सालगिरह मना रहे हैं उसकी दावत वे इसी बगीचे में देगें...। इस कोने में शमियाना तानेगें, वहॉ कुर्सियां लगेगी... और उस कोने पर हिबिस्कस की झाड़ीं के पास खाने की मेजे...। गार्डन पार्टी शानदार रहेगी।

अचानक उसकी नजरों के सामने सुरेश प्रकट हुआ। कन्धे पर बैग लटकाये, हाथों में बड़े-बड़े सूटकेस पकड़े और रोनी सूरत बनाये वह बगीचे के एक तरफ बने बजरी बिछी पथ को पार करते हुये चला आ रहा था। कमला को सहसा गुजरे दिनों की याद आ गई... जब सुरेश कन्धे पर बस्ता लटकाये स्कूल से थका-मांदा घर लौटता था। यकायक कमला खड़ी हो गई, चेहरे पर व्यग्रता फैल गई। चाय का कप खिड़की की सिल पर रख अपनी उगंलियां मड़ोरने लगी।

"देखो, सुरेश आ रहा है," सहमे स्वर में वह गोविन्द प्रकाश से बोली। वो एक गद्देदार आराम कुर्सी पर पसरे टीवी पर टर्की व डेनमार्क के बीच चल रहे फुटबॉल मैच का लुत्फ उठा रहे थे।

वह खीजे भाव से बोले, "तुम ऐसे डर कर क्यों बोल रही हो?"

"वह अपना सभी सामान लिये हमारे पास लौट कर आ रहा है। देखो तो सही...।"

गोविन्द प्रकाश कुर्सी से उठकर दरवाजे पर पत्नी के साथ खड़े हो गये। दोनों सांस थामे सुरेश को देखने लगे जो एक-एक पग भर कर उनके करीब आ रहा था - हाथों में दो बड़े सूटकेस थामे, कन्धे पर भारी बैग लटकाये। चेहरा एकदम स्याह।

"क्या हुआ?" दोनों ने एक साथ पूछा।

वह घर के अन्दर प्रविष्ट हुआ। सामान फर्श पर टिकाया। गोविन्द प्रकाश की छोड़ी हुई ईजी चेयर में चुपचाप बैठ गया।

एक लंबी चुप्पी...।

"क्या हुआ?" दोनों ने फिर पूछा।

"लिंडा मेरे साथ नहीं रहना चाहती," वह मायूस स्वर में बोला।

दोनों चौंक गये।

"लिंडा ने तुझे छोड़ दिया!" कमला दुखद आश्चर्य से बोली।

उसके होंठ कंपकंपाने लगे। वह हथेलियों में अपना चेहरा छुपाये फफक कर रोना चाहता था। कमला ने उसे अपनी बांहों में लपेट लिया। "बेटा, तू पूरे डेनमार्क राज्य का सबसे आकर्षक पुरूष है। गोरी या काली, लड़कियां तुझ पर फिदा रहती थी, तेरे चारों तरफ मंडराती रहती थी। तू तो कृष्ण कन्हया है। और उस बेवकूफ औरत ने तुझे छोड़ दिया...। अपने किये पर वह पछतायेगी।"

सुरेश ने सुस्त नजरों से अपनी मॉ को देखा।

वह उसे विश्वास दिलाते हुये बोली, "हॉ... वह जरूर पछतायेगी।"

"हमें जो डर था, वह देखो हो गया..." गोविन्द प्रकाश बोले। "जब तू उससे शादी कर रहा था, हमें सिर्फ इस बात का डर था कि तुम्हारी शादी देरसबेर टूट जायेगी।"

"छ: महीने का सेपरेशन, फिर तलाक," वह खोये स्वर में बोला।

"तलाक ! यह हमारे खानदान में कभी नहीं हुआ," कहते हुये कमला का हृदय सिहर उठा। वह आक्रोश से बोली, "इन गोरे लोगों में तो जरा भी सहनशीलता नहीं है। छोटी-छोटी बातों में तलाक लेलेते हैं...।"

"बड़ी जल्दी ही इन्हें गुस्सा आ जाता है," गोविन्द शान्डिल्य ने जोड़ा।

"लिंडा को यह सोचना चाहिये था कि उसने एक इंडियन से शादी की है। हमारे यहॉ औरते कभी भी अपने पतियों को छोड़ती नहीं हैं चाहे वे कुछ भी कर ले," कहते हुये कमला ने अनायास ही गोविन्द प्रकाश की तरफ देखा। सकपका कर उन्होंने गर्दन झुका दी।

सहसा कमला सुरेश से पूछने लगी, "पर तूने ऐसा क्या किया कि लिंडा ने ऐसा कठोर निर्णय लिया है, वह भी शादी के इतने सालों बाद। वह तो तुझे बहुत प्यार करती थी।"

सुरेश ने सच बोलते हुये सारी बातें हूबहू बता दी।

"तूने अपनी पत्नी पर शक किया कि वह किसी दूसरे आदमी से मिलने लगी है !" कमला विस्मय से बुदबुदाई ।

वह थोड़ा झिझका, उसे शर्मिन्दगी महसूस हुई, फिर उसने चुपचाप सहमति में गर्दन हिला दी।

"ना... ना... यह बेटा तूने ठीक नहीं किया। पत्नी के चरित्र पर शक...छि:, थू।"

"तेरी हिम्मत कैसी हो गई अपनी पत्नी पर शक करते हुये," गोविन्द प्रकाश भी भड़के। "अगर वह कह रही थी कि मोरगन उसका दोस्त है तो वह सिर्फ दोस्त ही होगा। ये गोरे लोग कभी झूठ नहीं बोलते। हमारी तरह बातों को उलझा कर भी नहीं कहते। ईमानदार होते हैं ये लोग।"

"तू उस पर शक करता है वह तेरे साथ कैसे रहेगी भला?" कहते हुये कमला अति भावुक हो गई। उसकी आंखों से आंसू झरने लगे जिन्हें वह अपने कुर्ते की बॉह से पोंछने लगी।

"तुझे उसे इतनी छूट देनी चाहिये थी। वह एक आजाद माहौल में पली–बड़ी लड़की है - स्केन्डिनेवियन लड़की है वह। इनके पुरूष मित्र भी होते हैं," गोविन्द प्रकाश बोले।

सुरेश सिर झुकाये, खामोश माता–पिता की बातें सुनता रहा। चेहरे पर मुर्दनी छायी हुई।

गोविन्द प्रकाश को सहसा अपने लड़के पर दया आ गई। एक लंबी सांस खिंचते हुये बोले, "देख, सुरेश, जब तू अपना सामान समेटे हमें छोड़ कर लिंडा के पास जा रहा था तो हमने तुझे मना किया था। आज बारह सालों बाद तू लौट कर हमारे पास आ गया तो इसे भी हम गलत कहेगें। तू तुरन्त अपना सामन उठा कर लिंडा के पास वापस जा। उससे माफी मांग। जो कुछ भी संदेह, भ्रम तुम दोनों के बीच पैदा हो गये हैं, मिल-बैठ कर कायदे से आपस में सुलझा लो। "

"मैं कोशिश कर चुका हूॅ। मैंने उससे माफी भी मांगी," सुरेश ठंडे स्वर में बोला।

"तो हम बात करें लिंडा से?"

"नहीं, कोई फायदा नहीं। समझौते की कोई गुंजाइश नहीं। सब कुछ खतम हो गया। वह आपका इस सन्दर्भ में फोन करना तक पसन्द नहीं करेगी।"

गोविन्द प्रकाश व कमला जानते थे कि उनके बात करने से कुछ नहीं होगा। यहॉ माता-पिता का अपने बच्चों की जिन्दगी पर अधिकार होता ही कहॉ है !

"तेरे लिये चाय लेकर आती हूँ..." उसके सूखे होंठों को निहारते हुये कमला ने कहा।

उसने मूक सहमति दी। कल से उसने एक निवाला तक नहीं खाया था। एक कमजोरी महसूस हो रही थी। उसे आहार की आवश्यकता थी।

कमला किचन में गई और कुछ देर बाद उसके बचपन के मग में उसके लिये चाय भर कर लायी। मग किचन के कपबर्ड में कई सालों से यूं ही पड़ा हुआ था। मग पकड़ाते हुये कमला ने सुरेश की प्रतिक्रिया देखी। बिना कोई भाव जताये उसने मग पकड़ा और चुपचाप चाय के घूंट भरने लगा।

गोविन्द प्रकाश दीवार पर टंगी घड़ी को देखते हुये बोले, "तीन बज गये, कमला। मंदिर नहीं चलना?"

"हम कहीं कैसे जा सकते हैं, शान्डिल्य जी? आज इतनी दुखद बात हमारे लिये हो गई है। हमारे घर की बहू ने हमसे सम्बन्ध तोड़ दिये हैं और वह तलाक की बात कर रही है। क्या इससे पहले हमारे खानदान में किसी पति-पत्नी के बीच तलाक हुआ? कहते हुये कमला की आखें फिर डबडबा गई।

गोविन्द प्रकाश ने इन्कार में खामोश गर्दन हिलाई। वो भी विमूढ़ से हो गये।

कमला रूंधे स्वर में बोली "हमारे खानदान में पति-पत्नी के बीच लड़ाई-झगड़े हुये, बेवफाई हुई, मारपिटाई हुई, शक-सन्देह हुये, दुश्मनी हुई मगर तलाक कभी नहीं हुआ। क्या उत्साह मनायें हम अपनी शादी की पचासवीं सालगिरह मनाने में जब हमारा बेटा अपनी पत्नी के साथ कोर्ट में तलाक के पेपर्स दर्ज कर रहा है? शांडिल्य जी, सभी को फोन करो और कहो कि हम अब नहीं मना रहें अपनी शादी की सालगिरह। वे परसों हमारे घर न आयें।"

"आई एम सॉरी," दबे स्वर में सुरेश ने माफी मांगी।

"यह तेरी गलती नहीं है, बेटा... यह उसका परिणाम है जो हम अपना देश छोड़ कर इस देश में आकर बस गये। हमने यहॉ सिर्फ कमाया ही नहीं, काफी कुछ गंवा भी दिया है।"

रोती हुई पत्नी को गोविन्द प्रकाश ने कुछ पल ताका। उसे एक टीशू पकड़ाया व एक गिलास पानी। फिर धीरे से सुझाते हुये बोले, "अपनी शादी की सालगिरह मनाने के बारे में हम बाद में बात करेगें, सुधा की मॉ। अभी मंदिर चलो। मंदिर जाकर तुम्हें कुछ शान्ति मिलेगी।"

टीशू से आंसू पोंछते हुये कमला ने सुरेश की ओर देखा। वह चुपचाप चाय पी रहा था। "सुरेश, तू कभी किसी भगवान के विषय में नहीं सोचता।" कमला के स्वर में एक आरोप था। "इतने सारे देवी-देवतायें हैं हमारे, किसी का तो ध्यान कर। चल आज हमारे साथ मंदिर चल। भगवान पर सब कुछ छोड़ दे।"

सुरेश ने जोर से गर्दन हिला कर मना किया। चाय के लंबे-लंबे घूंट भरे। खाली मग मेज पर रखा। तत्पश्चात अपना सामान उठा कर अपने कमरे में घुस गया— एक अनिश्चित काल के लिये...।

ः 3 ः

"इसमें बिल्कुल भी अचरज नहीं कि सुरेश और लिंडा का डायवोर्स हो गया। जब सुरेश उससे शादी कर रहा था तभी हमे सन्देह था कि यह शादी... ऊंहू... ज्यादा साल टिकेगी नहीं। इन गोरागों में इतनी सहनशीलता नहीं कि हमारी तरह किसी एक के साथ पूरी जिन्दगी काट दे...। यहां हरेक दो शादी में एक तलाक है। पैंतालीस प्रतिशत है यहां तलाक का रेट और सभी लोग यहां शादी भी नहीं करते। कितने यहां बिना शादी किये साथ रहते हैं..." एयरपोर्ट से उनका घर बीस मिनट की दूरी पर था। वे घर पहुँचने वाले थे मगर निर्मल शर्मा सुरेश व लिंडा के आपसी सम्बन्धों पर लगातार बोलने में लगा था, जिसमें वह सुरेश को कम व लिंडा को अधिक दोषी करार रहा था।

"आप केवल लिंडा को ही गलत नहीं ठहरा सकते," रीना बार-बार अपने पिता से बोल रही थी।

उसके वक्तव्य को नजरान्दाज कर निर्मल गर्दन मोड़कर हरि की ओर उन्मुख होकर कहने लगा, "तुम इस देश में रहने चले आओ हो, हरि कुमार...। मगर यहॉ तीन बातों का कभी भरोसा मत करना — वेदर, वर्क और वूमेन...। वेदर यहॉ किसी भी क्षण बन और बिगड़ सकता है। वर्क से तुम्हें बिना किसी पूर्व चेतावनी के बर्खास्त किया जा सकता है, और तुम्हारी वूमेन बिना किसी स्पष्ट कारण के तुम्हें छोड़ सकती है। थ्रो-अवे कल्चर यहॉ बहुत ही स्ट्रान्ग है। बी अवेर !" कहते हुये निर्मल खिलखिला पड़ा।

"पापा!" रीना कुपित सी होती बोली। उसे यह बिल्कुल भी नहीं सुहाता था कि जिस देश में उसके पिता इतने वर्षो से रह रहें हैं वहॉ के समाजिक नियमों का उपहास करे।

"यूज करो और फैंको," अपने वक्तव्य पर और तुड़का देते हुये निर्मल खूब जोरो से हंसने लगा।

हरि ने मुस्कुराने की चेष्टा की मगर नहीं मुस्कुरा सका। उसके लिये अभी ये ब्योरे महत्वहीन थे। रीना उसका चेहरा अपने सामने शीशे में पढ़ रही थी। वह दुश्चिन्तित था। शायद सोच कर घबरा रहा था कि उसे यहॉ कोई ठोर-ठिकाना मिलता भी है कि नहीं। कहीं उसे लौट कर हिन्दुस्तान न जाना पड़े!

कोपनहेगन के एक उपनगर तास्तरूप में शर्मा परिवार का एक छोटा सा दोमंजिला व खूबसूरत घर था। प्रवेश द्वार सामने से नहीं साइड से था। घर पहुंचते ही हरि गर्म पानी के फुव्वारे के नीचे भरपूर नहाया। नये-धुले कपड़े पहने। इस बीच निर्मल किचन में लग गया, चाय-नाश्ते का इन्तजाम करने में। और रीना फोन पर — केबीसी मिशन का पता लगवाने। काफी देर के प्रयासों के उपरान्त, कई लोगों से बात करने के बाद अन्तत: उसकी बात मिशन के कॉरडीनेटर पीटर पेटरशन से हो गई। वह हरि के विषय में जानता था। वह रीना से बोला कि हरि कुमार बेलरूप स्थित मिशन के फील्ड हॉस्टल में जाये। बाकी सारी जानकारी उसे वहॉ मिल जायेगी।

"हरि कुमार यही हैं। वो आपसे स्वयं बात कर लेगें तो अच्छा रहेगा," रीना पीटर पेटरशन से बोली।

हरि, जो पूरी सजकता से रीना को फोन पर पीटर पेटरशन से बात करते हुये सुन रहा था, तुरन्त फोन के नजदीक आया और उसके हाथों से रिसीवर लेलिया। गला साफ करते हुये सधे शब्दों में बोला, "आई एम हरि कुमार। टूडे अराइड फरोम इंडिया। अभी फिलहाल तो मैं एक इंडियन फेमीली के साथ हूँ, जिनसे बाय चांस एयरपोर्ट पर मुलाकात हुई। बहुत ही अच्छे व मददगार लोग हैं। लेकिन मैं जल्दी से जल्दी केबीसी मिशन पहुँच जाना चाहता हूँ।" तत्पश्चात रीसिवर को कान पर चिपका कर वह पीटर पेटरशन को पूरी खामोशी से सुनता रहा, बीच-बीच में 'ओह आई सी,' 'याह...' 'सो नाईस' ' इन्टरस्टिंग' जैसे विस्मय बोधक चीत्कारों को बुदबुदाता रहा ।

रिसीवर नीचे रखने से पहले उसने उसे दो-तीन बार 'थेंक्यू,' 'सो नाइस ऑफ यू' कहा। फिर बड़ी गर्मजोशी से पीटर पेटरशन से हुई बातों को रीना को सुनाने लगा, "पीटर पेटरशन बहुत अच्छी अंग्रेजी बोले रहे थे। उन्होंने

अपने मिशन के बारे में बताया कि उनके केबीसी मिशन में पचास स्टूडेन्टस हैं जोकि चौदह अलग-अलग देशों से हैं। कह रहे थे कि बेलरूप में उनका एक बहुत बड़ा केम्पस है जिसका पता उन्होंने... ।"

"मुझे देदिया है," रीना हंसते हुये बोली। "चलिये, अब चाय पीजिये।"

सुधा हमेशा जायकेदार नमकीन स्नैक्स फ्रिजर में स्टोर करके रखती थी। निर्मल ने स्प्रिंग रोल्स निकाले व ऑवन में गर्म किये। और भी रेडीमेट चीजें नमकीन, बिस्कुट, खजूर आदि भी मेज पर लगा दिये। "अरे इतनी सारी चीजें खाने के लिये! " हरि चीजों पर नजरे घुमाते हुये चहकते हुये बोला और जल्दी से डाइनिंग टेबल पर बैठ गया। वह अब स्वयं को एकदम तनावरहित व हल्का महसूस कर रहा था। सुखद अरामदायक घर का माहौल, गर्म पानी से स्नान, तन पर साफ-सुथरे कपड़े और पीटर पेटरशन के साथ बातचीत ने उसके भारी मूड को उन्मुक्त कर दिया था। अब वह शर्मा निवास को निहार रहा था – कमरे की एक-एक चीज परख रहा था। पहले वह इतना थका था कि घर की तरफ उसका ध्यान ही नहीं गया। उसे शर्मा निवास बेहद सुव्यवस्थित लगा। परिष्कृत सज्जा में योरोपियन व भारतीय कला दोनों का ही पुट था।

"आपका घर बहुत सुन्दर है," वह रीना से बोला।

"मम्मी देख-संभाल करती है," रीना बोली।

"मम्मियां ग्रेट होती हैं। पर वह अभी हैं कहॉ?" इधर-उधर नजरे घुमाते हुये उसने पूछा।

"ऑफिस में है," निर्मल बोल।

"क्वाइट इन्टरस्टिंग। वह जॉब भी करती हैं और घर भी इतने करीने से रखती है। सर आप लकी हैं।"

"पता नहीं," निर्मल कन्धे उचकाते हुये बोला। यह सच्च्वाई निर्मल से सहन करनी मुश्किल होती थी कि उसकी पत्नी की नौकरी व वेतन उससे बेहतर है और इस वजह से वह अपनी नौकरी में उससे अधिक व्यस्त भी रहती है। सुधा की पढ़ाई-लिखाई बचपन से डेनमार्क में हुई थी, जबकि निर्मल एक वयस्क उम्र में, विवाह के बाद डेनमार्क आया था। नई अनजानी जगह में नौकरी ढूंढनी व केरियर जमाना इतना सरल तो नहीं। नई भाषा सीखनी पड़ी, नये तौर-तरिके अपनाने पड़े, नये संघर्ष करने पड़े। यह सब करके निर्मल अपने लिये एक मामूली नौकरी ही जुटा पाया था।

रीना को पता चल रहा था कि हरि स्वभावानुसार एक बातूनी बन्दा है। निर्मल को 'सर' सम्बोधित करते हुये वह लगातार उससे बतिया रहा था। निर्मल को उससे बात करते हुये आनन्द आ रहा था और शायद उसका सम्बोधन भी उसे भा रहा था।

"सर, मैं आपकी कुछ मदद करूं?" निर्मल को किचन से चाय लाते देख उसने पूछा।

"नहीं, आज आप हमारे घर पहली बार आयें हैं। आज हमें ही ापनी आावभगत करने दे। फिर जब कभी दुबारा आयेगें तो मैं जरूर आपसे कुछ करने को कहूंगा।"

"अवश्य सर। इट विल भी माय प्लेजर।"

टेबल पर चाय-नाश्ता लगाते हुये व हरि से बात करते हुये निर्मल की एक नजर घड़ी पर भी गड़ी हुई थी।

रीना ने जब अपने पिता को अपने साथ चाय के लिये डाइनिंग टेबल पर आमंत्रित किया तो वह हंसते हुये बोला, " मैं अभी नैना को *बॉर्नहेव* से ले आता हूॅ। उसने कहा था कि जब दीदी इंडिया से आयेगी तो मुझे *बॉर्नहेव* से ले आना।" हरि से बोला, "अच्छा तो थोड़ी देर में मिलते हैं। मैं अपनी छोटी बेटी को लेने उसके किन्डरगार्टन जा रहा हूॅ," कहते हुये वह चला गया।

"तुम्हारी बहन क्या इतनी छोटी है कि किन्डरगार्टन में पढ़ती है?"

हरि के प्रश्न ने रीना को सहसा गुजरे हुये दिनों की याद दिला दी... उसके जन्म के काफी सालों तक सुधा दुबारा प्रेगनेंट नहीं हो पायी थी। डाक्टरों के चक्कर लगाये, सफलता नहीं मिली। एक तरीके से उन्होंने दूसरे बच्चे की

उम्मीद ही छोड़ दी थी। मगर रीना के सौलवें जन्मदिन के तीन महीनों उपरान्त सुधा फिर प्रेगनेंट हो गई। शर्मा दंपत्ती के लिये यह खुशी की बात थी तो थोड़ी लज्जा की भी। रीना जवान हो गई थी। उसका कद अपनी मॉ के कद से काफी ऊपर निकल गया था। प्रेगनेन्सी के समय सुधा जब कभी रीना के साथ किसी सामाजिक समारोह में जाती तो लोगों की घूरती नजरें कभी मॉ पर ठहरती तो कभी बेटी पर। कुछ शरारती औरते उससे मजाक किया करती, "सुधा, तुम्हें तो किसी और की जरूरत ही नहीं डिलीवरी के समय। तुम्हारी लड़की ही तुम्हारी देखभाल कर लेगी।"

रीना लोगों के मजाक व कटाक्ष मौन सुना करती लेकिन जब सुधा का समय आया तो उसे एक प्रसूता मानते हुये रीना ने अपनी मॉ की बहुत देखभाल की। वह भी घर में अपना कोई छोटा भाई या बहन देखना चाहती थी। उसकी सेवा से सुधा इतनी भावविह्ल हुई कि भावुक होते हुये उससे बोली, "रीना, जब तेरा मां बनने का समय आयेगा तो मैं भी तेरी बहुत देखभाल करूंगी...।

यादों के गल्वर से बाहर निकलते हुये रीना हरि से बोली, "हॉ, मेरी बहन मेरे सत्रवें जन्मदिन के दिन पैदा हुई थी।"

"ओह तो आप दोनों बहने अपना जन्मदिन एक दिन मनाती हैं !"

"यप्प।"

"इन्टरस्टिंग।"

'दीदी...' कहते हुये नैना घर में घुसी और भागते हुये रीना की गोद में चढ़ गई। उसके लिये उसकी छोटी बहन एक बच्ची की तरह थी जो जब-तब उसकी गोद में चढ़ जाया करती थी। अभी पिछले साल तक वह उसके स्तनों को भी छूया करती थी, विस्मित कि उसकी बहन के अगभाग में भी वह गोल व मुलायम अंग हैं जो मम्मी में हैं।

"दीदी, इण्डिया कैसा लगा? मैंने तुम्हें यहॉ बहुत मिस किया," कहते हुये नैना ने उसके गाल पर एक चुंबन अंकित कर दिया।

"मैंने भी नैन, तुझे बहुत मिस किया," कहते हुये रीना ने उसे चूम लिया। "इण्डिया में अगर मैंने कुछ मिस किया तो सिर्फ तुझे।"

"ओह दीदी..." पुचकारते हुये नैना ने उसे दो–तीन बार फिर चूमा, फिर बड़े भोलेपन से पूछा, "दीदी, तुम मेरे लिये क्या लायी हो?"

रीना हॅसी। अपनी बहन को गोदी से नीचे उतार कर अपने सूटकेस के पास गई, और खोल कर तमाम चीजें, खुद की खरीदे हुई व लोगों द्वारा भेंट की हुई, निकाल कर मेज पर रखने लगी। हिन्दुस्तानी शिल्प कलाओं को उदघाटित करती वस्तुयें; एम्पोरियम, दस्तकारी व कढ़ाई के नमूने, रसगुल्लों का डिब्बा, सोहन पापड़ी, हल्दीराम के नमकीन के पैकेट, अचार का डिब्बा... एक झुंड सा मेज पर लग गया।

झुंड को एकटक निहारते हुये निर्मल बोला, "मिनी इंडिया!" नैना 'वाऊ-वाऊ' कहते हुये जितनी चीजें अपनी मुटठियों में भर सकती थी उसने भर ली। दूर बैठा हरि मंद-मंद मुस्कुराता रहा।

हरि अब उनकी जिम्मेदारी थी। रीना अपने पिता को हरि को लेकर अधिक परेशान नहीं करना चाहती थी। सो एक घंटे उपरान्त वह खुद ही अपनी सुजुकी से उसे उसके फील्ड हॉस्टल छोड़ने गई। कई जगह रास्तों में रूकते हुये, सिटीमेप पर नक्सा देखते हुये, लोगों से पूछते हुये वे फील्ड हॉस्टल की सफेद व सपाट इमारत पर पहुॅच गये। इमारत एक घने जंगल के सरहद पर बनी थी, एक ओर से शहर का फैलाव व दूसरी ओर से जंगल का। रीना ने कार पार्क की, उतर कर डिक्की खोली। सामान उठाकर वह और हरि केवीसी मिशन के आहते के ऊंचे फाटक के आगे खड़े हुये। रीना ने घंटी बजाई तो अन्दर से किसी ने बिना किसी पूछताछ के बजर दबा दिया। सम्भवत: उसने उन्हें केमरे में देख लिया हो। रीना दरवाजा धकेल कर अन्दर प्रविष्ट हुई, पीछे-पीछे धड़कते दिल से हरि। दोनों सावधानी से रिसेप्सन की तरफ बढ़े।

पहली बार रीना किसी मिशनरी सेंटर में आयी थी। उसने सोचा था कि वहॉ सफेद चोगे पहने फादर या पीस्ट् नजर आयेगें। मगर रिसेप्सन पर जो दो वरिष्ठ पुरूष और एक प्रोढ़ महिला मौजूद थे उन्होंने वस्त्र बिल्कुल सामान्य, आम आदमियों जैसे पहने थे। वे बिल्कुल आम व्यक्तियों की तरह लग रहे थे। "गुड डे!" उनमें से एक पुरूष बोला। रीना हरि का परिचय देने लगी कि वह अपने डेनिश उच्चारण में बोला, " हैरी !"

हरि फूला नहीं समाया। वह तीनों अपनी कुर्सियों से उठ कर उनसे ऐसे मिले जैसे उन्हें हरि के आगमन की सूचना मिल चुकी थी और वे उसके पहुॅचने का इन्तजार कर रहे थे। तीनों ने उनसे हाथ मिलाया। रीना ने उन्हें हरि से एयरपोर्ट पर हुई अपनी चांस-मीटिंग व अन्य सभी बातें बतायी तो उन्होंने उसका आभार प्रकट किया। तदुप्रांत महिला, जिसके अधिकांश बाल सफेद हो गये थे मगर जीवन से अब भी भरी थी, ने जो कुछ भी उस परिसर के अन्दर स्थित था उन्हें उसका भ्रमण करवाया। निचली मंजिल पर रिसेप्शन, पार्लर, लाइब्रेरी, किचन, मेस व प्रेयर रूम। आगे-पीछे सुन्दर बगीचा, क्यारियां, फलोद्यान व पेड़ो के झरमुट। दूसरी व तीसरी मंजिल पर रहने के लिये कमरे। हरि से पूछा गया कि वह कौन सी मंजिल में कमरा चाहेगा। उसने कुछ सोचते हुये दूसरी मंजिल का चयन किया। महिला ने रिसेप्सन काउन्टर पर दराज खोलकर चाबियों का एक गुच्छा निकाला।

उसे समझाते हुये बोली, "ए चाबी बाहर मुख्य द्वार की है और बी तुम्हारे अपने कमरे की। वाई चाबी प्रेयररूम व लायब्रेरी की है।" तत्पश्चात वह लिफ्ट की ओर बढ़ गयी, पीछे-पीछे रीना और हरि। वह उन दोनों को लेकर दूसरी मंजिल पर आ गयी। गलियारे के दोनों तरफ कमरों के कम थे। नहाने-धोने के लिये गलियारे के अन्तिम छोर पर साझे लेटरीन व गुसलखानों की सुविधा थी।

206 नंबर के किवाड़ पर महिला ने चाबी घुमाई। दरवाजा धकेलते हुये बोली, "यह कमरा अब तुम्हारा है।" हरि उत्सुकता से अन्दर घुसा। कुतुहल भरी दृष्टि चारों तरफ डाली। छोटा सा कमरा... बेड, मेज-कुर्सी व अलमारी से सजा था। उन्हें कमरा दिखा कर व चाबी पकड़ा कर महिला चली गई।

"कमरा बहुत छोटा है। मैं रोज सुबह एक्सरसाइज करता हूॅ। यहॉ कहॉ करूंगा?" वह रीना से बोला। उसका सामान अभी तक उसके हाथों में था।

"सामान तो नीचे रखो," रीना उससे बोली।

"ओह," थोड़ा लज्जित हुये उसने सामान जमीन पर छोड़ा।

रीना ने उसे याद दिलाया कि अभी कुछ देर पहले वह कितना चिन्तित था कि पता नहीं यहॉ उसका कुछ हो भी पाता है या नहीं। अब उसके पास सब कुछ है। ऊपर सोने की जगह, नीचे खाने के लिये मेस, प्रेयर रूम, पार्लर, लाइब्रेरी...।

उसने सहमति में गर्दन हिलाई।

"तो ठीक है आप अपना सामान लगाइये। अपने नये घर का आन्नद उठाइये। मैं चलती हूॅ। जेट लेग मुझे मार रहा है। इण्डिया के मुताबिक रात के नौ बज रहे है। नींद सी आ रही है," कहते हुये रीना कमरे से निकल कर लिफ्ट की ओर बढ़ गई।

"रीना," वह पीछे से यकायक बोला।

जबसे उनकी मुलाकात हुई थी तबसे पहली बार उसने उसे उसके नाम से पुकारा था। रीना के दिल में एक खनक सी हुई। वह हठात् रूक गई। पीछे मुड़कर उसकी तरफ देखा। उसके चेहरे पर बहुत सारे भाव उमढ़ रहे थे। "थैंक्यू फॉर एवरी थिंग। अगर आप नहीं होती तो पता नहीं मैं क्या करता?" वह पनीली आंखों से बोला।

"यू आर मोर डेन वेलकम। आपको जब कभी किसी चीज की जरूरत हो, फोन कर लेना।"

"आं... यह अच्छा रहेगा अगर हम अपने फोन नंबर एक्सचेंज करले...।"

रीना ने एक पल सोचा। "ठीक है, " कहते हुये उसने कागज के एक टुकड़े पर अपना मोबाइल फोन नंबर लिखा, और उसकी तरफ बढ़ा दिया।

"मोबाइल फोन तो अभी मेरे पास है नहीं पर ये केबीसी मिशन के फोन नंबर हैं," कहते हुये उसे केबीसी मिशन का एक कार्ड उसकी तरफ बढ़ा दिया।

कार्ड पकड़ कर जिस रास्ते वह अन्दर घुसी थी, ऊपर चढ़ी थी उसी रास्ते से वह नीचे उतर कर बाहर निकल आयी। हरि बाहर गेट तक उसे छोड़ने आया।

गेट पर विदा लेते हुये उसने एक बार फिर उसे थैंक्यू कहा।

****

पॉच हफ्तों का अवकाश भारत के विभिन्न नगरों में बिताना रीना के लिये एक अच्छा परिवर्तन था। डेनमार्क वापस आकर रीना स्वयं को तरोताजा व प्रफुल्लित महसूस कर रही थी। मन ही मन वह खुद को दाद दे रही थी कि वह भारत अकेले गई और घूम कर आ गई। वाह!

कोपनहेगन में अपनी छूटी हुई दिनचर्या को वह फिर से पकड़ने लगी। युनिवर्सिटी खुल गई थी। नया सत्र शुरू हो गया था। कियोस्क की पार्टटाइम नौकरी, जिससे मिलता वेतन संचय करके उसने भारत यात्रा की थी, पर भी वह घंटे बजाने लगी थी। जिम कसरतें , संघ शाखा गतिविधियां व सखियों से मेल-मिलाप...। इन सभी कार्यकलापों के अलावा एक काम उसके विचारों में निरन्तर घूम रहा था - एकल विद्यालय के लिये चन्दा इकट्ठा करना। भारत यात्रा के महत्वपूर्ण और महत्वहीन उसके कई संस्मरण थे...।

रीना की बुआ की लड़की, आभा दिल्ली राजेन्द्र नगर में रहती थी। रीना के पिता व आभा की मॉ जुड़वा भाई-बहन थे। दूरी होने के बावजूद उनके बीच रिश्तों की गर्माहट थी। भारतभ्रमण के समय रीना दिल्ली, राजेन्द्र नगर अपनी कजिन के पास दो-चार दिन ठहरने गई। जैसा कि बूढ़े माता-पिता का अपने जवान बच्चों के साथ रहना भारत में एक सामान्य दस्तूर है, आभा के ससुर - यशपाल भारद्वाज - अपने बेटे-बहू के साथ रह रहे थे। रीना का उनसे सहज ही सामना हो गया।

उस भरी दोपहर में बेतहाशा घूमते कूलर के सामने वो बुजुर्ग एक अच्छे भोजन के उपरान्त पान चबाते हुये रीना व आभा को घेर कर बैठ गये। एक खरे लोकजन अध्यक्ष होने की वजह से उनकी बातें राजनेतिक, धर्म, दर्शन, नीति, पाखंड समाज व जिन्दगीं के पागलपन जैसे कई नीरस मुद्दों पर केन्द्रित रही।

"हम भारतीयों को मालूम हीं नहीं, वेयर डू डे बिलान्ग। भारतवासी अपनी भाषायें खो रहे हैं। साधू-सन्तों का महत्व समाज में फीका पड़ता जा रहा हैं। हमारे रीति-रिवाज छूटते जा रहे हैं। विदेशी कंपनियां लोकल लोगों के छोटे- छोटे उद्यम छीन रही हैं। यहॉ तक कि कुछ हिन्दू अपने वेद-उपनिषद भूल कर क्रिश्चयनति पर विश्वास करने लगे हैं...। "

"अच्छा!" रीना के मुख से निकल गया।

"बिटिया, ईसाइयत का यहॉ तब से आयात हो रहा है, जबसे अंग्रेज और पुतगाली उपनिवेशी इस उपमहाद्वीप में आयें। इतना ही काफी नहीं है कि उन्होंने ईसा मसीह को ढूंढ निकाला। वे चाहते हैं कि सारी दुनिया ई सा मसीह का पूजे। हिन्दुस्तान एक सशक्त देश होते हुये भी कई मायनों में हमेशा एक नाजुक देश रहा है। कईयों की नजर इस देश पर गड़ी रही। हमारे गरीबों की तस्वीरें खींच कर इन्टरनेशनल स्क्रीन पर दिखा कर विदेशी कंपनियां पैसा कमाती हैं। हमारे देश की भोली-भाली व गरीब जनता को मामूली सा लालच देकर क्रिश्चयन मिशनरियां उन्हें धर्म परिवर्तन के लिये उकसा देती हैं...। गरीब लोगों को बहकाना आसान होता है...।" सहसा उन्होंने घर के नौकर को आवाज लगाई, "मुन्ना, थोड़ी चाय..."

"बन रही है साब..."

थोड़ी देर में मुन्ना एक ट्रे पर भाप उढ़ती चाय ले आया। जिस तरह से अठाहरह वर्षीय मुन्ना 'जी साब,' 'जी मेडम' करके घर के लोगों की जीहुजूरी करता था, रीना को उस पर तरस आता था। कितना अस्तित्व विहिन है

यह बन्दा! किस तरीके से इसका इस्तमाल किया जाता है ! कहा जाता है कि अमीरों की अमीरी काफी कुछ गरीबों की गरीबी पर टिकी रहती है।

सबसे पहले मुन्ना ने ट्रे रीना की तरफ बढ़ाई। रीना मुस्कुराई। थैक्यू कहते हुये उसने एक मग उठा लिया। मुन्ना मुस्कुराया। उसे 'यू वेलकम' कहने जा रहा था मगर हड़बड़ाहट में पूरे शब्द जुबान से नहीं निकले। ंगर उसका चेहरा शर्म से लाल हो गया।

चाय का मग उठाते हुये यशपाल भारद्वाज बोले, "गर्मी गर्मी को मारती है।"

रीना ने सहमति में गर्दन हिलाई। आश्चर्य की बात थी कि कभी चाय न पीने वाली लड़की का भारत इस गर्मी के मौसम में आकर चाय में स्वाद जग गया था।

"तुमने एकल विद्यालय संस्था का नाम सुना है?" यशपाल भारद्वाज अपनी कुर्सी पर करवट बदलते हुये बोले।

रीना ने असहमति में गर्दन हिलाई। जहॉ तक उसकी जिन्दगी का सन्दर्भ था, यशपाल भारद्वाज उसके लिये एक निहायत ही महत्वहीन रिश्तेदार थे। उनके साथ बतियाने में उसे जरा भी मजा नहीं आ रहा था। वह तो यहॉ आभा की वजह से आयी थी और उसके ससुर उसे घेर कर बैठे रहते थे।

"इसकी नींव स्वामी विवेकानन्द ने रखी थी," वे बोले। "तुमने स्वामी विवेकानन्द का नाम सुना है?"

"थोड़ा बहुत।"

"स्वामी विवेकानन्द कहते थे कि समाज गन्दे लोगों के कर्मो की वजह से नहीं अच्छे लोगों की अकर्म ण्यता की वजह से नीच गिरता है। उन्होंने समाज को उठाने के लिये काफी अच्छे काम किये, उनमें से एकल विद्यालयों की स्थापना एक है। आज कई एनजीओ इस संस्था से संलग्न हो गये हैं। एकल विद्यालय ने एक आन्दोलन शुरू कर रखा है...अपनी गरीब व छोटी जाति की जनता को शिक्षित करना ताकि वे अपनी सही सोच-समझ रख सके। किसी के गलत प्रभाव में न आये। हमें न तो विदेशी भाषा की जरूरत है, न विदेशी संस्कृति की और न ही विदेशी धर्मो की। भाषा, धर्म और संस्कृति सभी मामलों में हम सर्वसम्मत हैं। एकल विद्यालय आन्दोलन का लक्ष्य सभी आदीवासी गॉवों के बच्चों को शिक्षित करना है। यह एक विरोधाभास है कि सोफ्टवेयर, स्पेस व न्यूक्लियर पावर में बृहत् तरक्की करने के बावजूद भारत आज भी एक बहुत बड़े खण्ड को साक्षर करने के लिये संर्घषरत् है...। तुम भारतभ्रमण पर आयी हो...। यहॉ के विराट् नगर ही मत देखो। यहॉ के गॉव-कस्बे देखो, हाट-बाजारों में घूमो, तब तुम्हें भारत की असली तस्वीर देखने को मिलेगी। असली भारत गॉवों में बसा है।"

अगले रोज यशपाल भारद्वाज उसे जीप से दिल्ली से सौ मील की दूरी पर गुड़गांव के पास स्थित एक गॉव में ले गये जहॉ हजार के करीब मुख्यतय: जट समुदाय के निवासी थे । कच्ची-धूलभरी सड़क से गुजरते हुये, मंडराते-रंभाते डंगरों व सिर पर लकड़ियों या घास का गट्ठा थामे चलती औरतों को बचाते हुये जीप जैसे ही गॉव में घुसी रीना को लगा जैसे वह एक अति दूरवर्ती बस्ती में आ गई है। झोपड़ियां, कच्चे-पक्के घर, खेत, डंगर, गोबर, चारा, घास व फूस ही चारों तरफ नजर आ रहा था। जिन्दगी की अति साधारण सुविधाओं से गॉव अभी कोसो दूर था।

जीप एक छप्परबन्द स्कूल के पास रूक गई। एक वृक्ष तले चल रहे एकल विद्यालय में गरीब बच्चों को पढ़ते देख रीना का दिल भर आया। बच्चों, अध्यापक व गॉव वालों ने रीना का जोरदार स्वागत किया कि यूरोप से वह उनके गांव आयी है। उसे बाजरे की रोटी, जलेबी व जामुन खिलाये। छाज पिलाया। बच्चों न उसके लिये गीत गाया: 'अथित देव भव...।' संस्था के एक प्रतिनिधि ने उसे समाज के हितार्थ चल रहे एकल विद्यालयों की अपरिहार्य ता से अवगत करवाया। उससे विनम्र अनुरोध किया कि अगर वह डेनमार्क में रह रहें हिन्दुस्तानियों को इन स्कूलों को चन्दा देने के लिये प्रेरित कर सके...।

यशपाल भारद्वाज उससे चहुल करते हुये बोले, "तुम तो वैसे भी आरएसएस प्रधान की बिटिया होने के नाते संघ परिवार की हो। हमारी इस योजना में हिस्सा लो। हमसे जुड़िये। यहॉ के समाज से जुड़िये। इस देश से जुड़िये। अगर बाहर एक देश के एनआरआईज सिर्फ हमारा एक स्कूल एडोप्ट कर ले तो...। उन्हें इस देश के अनाथ बच्चों

को एडोप्ट करने की आवश्यकता नहीं। वे यहॉ के स्कूल एडोप्ट करे। इससे वो एक साथ कई बच्चों का भविष्य सुधारेगें," कहते हुये यशपाल भारद्वाज ने उसके दोनों हाथ एकल विद्यालय परियोजना से सम्बन्धित पेम्फ्लेट्स व विडियो कैसेट से भर दिये।

फटे-पुराने व टल्लों वाले कपड़े पहने गॉव के वे दीन व दरिद्र बच्चे रीना के जेहन में रचे-बसे थे। उसने उसी वक्त प्रण कर लिया था कि वह उनकी पढ़ाई के लिये चंदा ही नहीं इकठ्ठा करेगी बल्कि उनसे दुबारा मिलने भी जायेगी। कुछ लोग उसकी सूची में थे जिन्हें वह जानती थी कि बिना किसी प्रतिवाद के उसे चन्दा दे देगें।

उस सुबह जब वह कोपनहेगन में अपने ड्राइंगरूम में बैठे सम्भावित चन्दा दाताओं की लिस्ट बना रही थी तो निर्मल मुस्कुराते हुये बोला, "अपनी लिस्ट में स्मिता भट्ट का भी नाम लिख ले।"

"अरे स्मिता भट्ट... मुझे उन्हें उनके पेरेन्ट्स का दिया पैकेज देना है," वह बोली और फोन की ओर बढ़ी। वह अभी तक स्मिता भट्ट से प्रत्यक्ष तौर पर मिली नहीं थी, अपने माता-पिता के संवादों में गूंजता उसका नाम सुना था। और भारत में उसके मातापिता के घर भी हो आयी थी।

"क्या उम्र होगी उनकी? क्या कह कर उन्हें सम्बोधित करूं?" रीसिवर उठाते हुये उसने अपने पिता से पूछा।

"अपनी मॉ की इंडियन फेन्ड्स को तू क्या कह कर पुकारती है?"

"आन्टी। कभी-कभी आन्टीजी!"

निर्मल कुछ सोचते हुये बोला, "स्मिता भट्ट इतनी बड़ी नहीं लगती कि तेरी जैसी जवान लड़कियां उसे आन्टीजी पुकारे। मुश्किल से वह अठ्ठाइस-उनतीस की...।"

"तेरे पापा को लगती होगी वह अठ्ठाइस-उनतीस की," सुधा एकाएक कहीं से प्रकट हुई और फुंकारते हुये बोली। "वह पैंतीस-छत्तीस से कम की नहीं होगी। दो बच्चों की मॉ है वह मेरी तरह।"

"पर उसकी बच्चियां हमारी नैना की उम्र की हैं, रीना की उम्र की नहीं," निर्मल ने दलील दी। "और यह न भूलो कि हमारी दोनों लड़कियों में सत्रह साल का अन्तर है।"

"पर जो कुछ भी हो वह अठ्ठाइस-उनतीस की हरगिज नहीं हो सकती !"

"क्यों नहीं हो सकती...?" निर्मल दावा करते हुये बोला। "हिन्दुस्तान में लड़कियों की शादी जल्दी हो जाती है।"

"अरे भई तुम लड़ क्यों रहे हो?" रीना अपने माता-पिता पर झुंझलाई। "स्मिता भट्ट कोई हमारी रिश्तेदार थोड़ी ही है। मैं उसे कुछ भी बोल लूंगी।" उसे अपने माता-पिता की निरर्थक की बहस में आश्चर्य होता था। अक्सर उसे उनकी बहस में कोई औचित्य नजर नहीं आता था। बच्चों की तरह झगड़ते हुये उसे अपने माता-पिता की लड़ाई बचकानी लगती थी।

"मैं उन्हें सीधे स्मिता कहूंगी," कहते हुये वह फोन नंबर मिलाने लगी।

"नहीं," निर्मल ने एकदम से प्रतिवाद किया। पहले तो वह इण्डियन हैं और फिर यहॉ आये उसे अभी ज्यादा समय नहीं हुआ। उसे बहुत ही अजीब लगेगा कि उसकी सहेली की लड़की उसे उसके नाम से पुकार रही है।"

"इट्स ओके निर्मल। यह डेनमार्क है। यहॉ लोगों को अंकल-आन्टी कहो उन्हें तब खराब लगता है। माई गॉड! क्यों तुम यहॉ हमेशा इण्डियन कल्चर ले आते हो? सट द डोर ऑन डैट," कहते हुये सुधा की भौंहे चढ़ गई, जिससे उसके प्रोढ़ चेहरे पर दरारें और भी स्पष्ट उभर आयी।

रीना ने अपनी मॉ को निहारा। ऐसे क्षणों में उसे अपनी मॉ एक बेहद चिड़चिड़ी अधेड़ औरत दिखती थी। चेहरे पर भारी मेकअप व सिर पर रंगे बाल उसकी उमर छुपाने में नाकामयाब रहते थे। अपनी झाड़ जैसी भौंहें तो वह ब्यूटी पार्लर जाकर पतली करा लेती थी। मगर अपने नाटे कद, दबा रंग और चपटी नाक का वह उम्र भर कुछ नहीं कर पायी। और तो और अब जवानी भी जा रही थी। कुछ महीनों से नजर का चश्मा भी लगाने लगी थी जिससे चेहेरे के भाव और भी सख्त दिखाई देते। रीना मन ही मन भगवान को धन्यवाद देती कि अच्छा हुआ कि वह शक्ल-सूरत

में अपनी मॉ पर नहीं गई। कहते है कि सुन्दरता वंशागत होती है। मगर वह जानती है कि वह अपनी मॉ की तुलना में बहुत अधिक सुन्दर है। उसने अपने पिता का नाक-नक्शा पाया है।

सुधा की चढ़ी भृकुटि नजरान्दाज कर निर्मल अपनी बेटी को सुझाने लगा, "ऐसा कर, रीना... तू पहले उसे 'आन्टी' पुकारनाा, अगर उसे कोई आपत्ति न हो तो यह सम्बोधन चलने देना, नहीं तो स्मिता–जी कहना। 'जी' -पूरी दुनिया में केवल हम इण्डियन्स के पास ही आदर का यह अनुलग्न है। हमारी भाषा की यह एक बड़ी देन है।"

"हैल्लो !" सुधा गुस्से से बोली, "तुम्हें रीना को यह बताने की जरूरत नहीं है कि वह मेरी सहेली को क्या कह कर संबोधित करे? मैं उसे बताऊंगी। रीना ऐसा कर...तू उसे कुछ मत कह। बिना कुछ सम्बोधित किये भी लोगों से बात की जा सकती है।"

"वह अब भले ही तुम्हारी प्रिय सखी बन गई हो पर उसका परिचय हमसे मेरी बहन के जरिये हुआ है। मेरी बहन ने ही उसे हमारा फोन नंबर वगैरह दिया था," उसे टोकते हुये निर्मल सोफे से खड़ा हो गया। गुस्से से उसका शान्त चेहरा थोड़ा तमतमाने लगा था।

"तो?"

"हम भले ही विदेश में रहते हैं, कई देशों के लोगों के साथ उठते-बैठते हैं, पर हमारी सांस्कृतिक परम्परा हमारी पहचान है। मैं नहीं चाहता कि मेरे बच्चे बड़े-बूढों को उनके नाम से पुकारे। मैं चाहता हूँ मेरे बच्चे सुसंस्कृत हो - कल्चर्ड। "

"तुम्हें यह लगता है कि यहां ये सब व्हाइट लोग अनकल्चर्ड हैं?"

"मेरे मुंह में शब्द न डालो।"

रीना को डर लगने लगा कि कहीं उनकी बहस लड़ाई में न बदल जाये, एक ऐसी वीभत्स लड़ाई जो वह अपने बीस वर्ष के जीवनकाल में कई बार देख चुकी थी। उसकी मां चीखने-चिल्लाने लग जाये, अपने बालों को नोचने लग जाये, अपने भाग्य को कोसने लग जाये, और पिता गुस्से में चीजों को पटकने लग जाये, जूते तान कर दनदनाते हुये घर से बाहर निकल जायगें और कई घंटों तक घर नहीं लौटेगें...।

उन्हें शान्त करवाते हुये वह बोली, "देखिये स्मिता भट्ट को मैं क्या कह कर संबोधित करूं यह बात बहुत ही छोटी है। आप दोनों की आपस में लड़ने वाली बिल्कुल नहीं है। आज आप दोनों ने अपने ऑफिस से छुट्टी इस बात पर लड़ने के लिये नहीं ली है। मम्मी, अपना माईग्रेन भूल गई जो आपको कल शाम से परेशान कर रहा है और आराम करने के लिये आज आप अपने ऑफिस नहीं गई। और पापा, आपको बहुत सारे लटके हुये काम पूरे करने है - कार को रिप्येर के लिये ले जाना है, एम्बेसी जाकर अपना पासपोर्ट रिन्यू करवाना है।"

"हूँ ! करते हुये सुधा उसी कोने में लुप्त हो गई जहॉ से वह प्रकट हुई थी। निर्मल खामोश सोफे पर वापस बैठ गया, तटस्थ, गंभीर चेहरा बना कर। सुधा व उसे एक-दूसरे की कई बातें पसन्द नहीं आती थी। पल–पल पर उन्हें महसूस होता था ही कि दुनिया के दो भिन्न हिस्सों में पलने–बढ़ने की वजह से उनके दृष्टिकोण, सोचने-समझने के तरीकों व मान्यताओं में भिन्नता हैं। मगर एक-दूसरे को छोड़ने का ख्याल उनके मन में कभी नहीं आया। एक-दूसरे के प्रति वे वफादार तो बने रहे लेकिन एक-दूसरे को दिलोजान से चाहना, एक-दूसरे पर मर-मिट जाना जैसे अन्तरतम प्रेम भाव उनके बीच कभी नहीं पनपे। बहरहाल रीना अपने माता-पिता के रिश्तों को बेहतर बनाने के लिये अपनी तरफ से काफी प्रयास किया करती। अक्सर फिल्म या नाटकों के उनके लिये टिकट खरीद कर ले आती; किसी रेस्टोरेंट में उनके लिये टेबल बुक करवा देती; या फिर नैना को बाहर पार्क में यूं ही खेलने के लिये लेजा लिया करती, इस उद्देश्य से कि उसके माता-पिता घर में कुछ समय अकेले में व्यतीत कर सके।

थोड़े उलझन के भाव से उसने स्मिता भट्ट के घर का नंबर मिलाने के लिये रीसिवर फिर उठाया। "स्मिता जी या आन्टी?" ऐसे में उसे लगता है कि पाश्चात्य संस्कृति ठीक है — न उम्र का लिहाज, न रिश्तों की गरिमा, बस सभी को उनके प्रथम नाम से सम्बोधित करो – पीटर, एना, सीना, राससमुस...। यह एक सच भी है कि हमारे कानों को सबसे प्रिय आवाज अपने नाम की ही लगती है।

स्मिता भट्ट के घर घंटी बजती गयी। किसी ने रीसिवर नहीं उठाया। "लगता है स्मिता भट्ट घर में नहीं है," वह अपने पिता से बोली।

निर्मल के गंभीर, तटस्थ चेहरे पर मुस्कान बिखर गई। रीना ने अपने पिता के चेहरे पर छायी सौम्य मुस्कान पढ़ी। सहसा उसे आभास हुआ कि उसके पिता स्मिता भट्ट को विशेष तौर पर पसन्द करते हैं। यह सच है कि स्मिता भट्ट से उनकी पहचान उनकी बहन के जरिये हुई थी - वह बहन जो उनकी प्रिय होने के अलावा उनकी जुड़वा भी थी।

"वह कहीं चली गई होगी," निर्मल मुस्कुराते हुये बोला। "नई-नई यहॉ आयी है न! थोड़ी जिज्ञासु स्वभाव की भी है। सुपरमार्केट वगैरह घूमती रहती है..."